Biyani's Think Tank

***Concept based notes***

# Psychological Foundation of Teaching Learning

*M. Ed.*

Shyam Sundar Kumawat

Deptt. of Education

Biyani Girls B.Ed. College, Jaipur

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

*Published by :*

**Think Tanks**

**Biyani Group of Colleges**

*Concept & Copyright :*

**©Biyani Shikshan Samiti**

Sector-3, Vidhyadhar Nagar,

Jaipur-302 023 (Rajasthan)

Ph : 0141-2338371, 2338591-95 • Fax : 0141-2338007

E-mail : acad@biyanicolleges.org

Website :www.gurukpo.com; www.biyanicolleges.org

Access to Your Study Related Queries...

**First Edition : 2009**

While every effort is taken to avoid errors or omissions in this Publication, any mistake or omission that may have crept in is not intentional. It may be taken note of that neither the publisher nor the author will be responsible for any damage or loss of any kind arising to anyone in any manner on account of such errors and omissions.

*Leaser Type Setted by :*

**Biyani College Printing Department**

# Preface

I am glad to present this book, especially designed to serve the needs of the students. The book has been written keeping in mind the general weakness in understanding the fundamental concepts of the topics. The book is self-explanatory and adopts the “Teach Yourself” style. It is based on question-answer pattern. The language of book is quite easy and understandable based on scientific approach.

Any further improvement in the contents of the book by making corrections, omission and inclusion is keen to be achieved based on suggestions from the readers for which the author shall be obliged.

I acknowledge special thanks to Mr. Rajeev Biyani, *Chairman* & Dr. Sanjay Biyani, *Director* (*Acad.*) Biyani Group of Colleges, who are the backbones and main concept provider and also have been constant source of motivation throughout this Endeavour. They played an active role in coordinating the various stages of this Endeavour and spearheaded the publishing work.

I look forward to receiving valuable suggestions from professors of various educational institutions, other faculty members and students for improvement of the quality of the book. The reader may feel free to send in their comments and suggestions to the under mentioned address.

**Author**

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries.

# Syllabus

**Unit I: General conception of teaching:**

1. Teaching: Its fundamental dimension such as the teacher, the student, the learning material and learning objectives, the methods, the environments as they interact with each other and determine student learning a discussion of how they affect teaching learning.
2. Theories of Teaching: The concept relation to theories of learning, the concept of a model for Teaching, a few illustrations such as Robert Glasser's Basic Model of teaching, Flander's interaction Model of Teaching.

**Unit II: School of Psychology and learning Theories:**

1. An introduction to behaviorism, Functionalism Gestalt Psycho-analysis. Learning theories with class room implication (a) Connectionism (b)

Classical Conditioning (c) Operant conditioning cognitive field theory contributions of Piaget, Bruner and Ausubel to learning.

**Unit III: Psychological Determinants of Teaching Learning:**

a. Cognitive abilities: Intelligence creativity, attitude, Nature, measurements and implication for teaching learning......
b. motivation: Nature, classification and theories, maslow's self actualization and Maslow's achievement, Motivation with reference to research done in India.
c. Personality:- characteristics, interests needs adjustment, anxiety self concept, their nature and measurement and implications for teaching learning.
d. Creativity;- concept measurement and creative teaching.

**Unit IV: Adjustment:**

Psychology of Adjustment, Adjustment process and different adjustment mechanism. Maladjustment and corrective measures.

**Unit V: Group Dynamics:**

Concept, structure and process, Class room climate and its educational implications.

**Unit VI: Innovations in Teaching Learning:**

a. Education Technology: meaning, brief history, its three types (Edu. Technology I, Edu. Technology II, Edu. Technology III)
b. Programmed Instruction; definition, Origin, types, principles of linear and branching programming, steps in the construction of a programme.
c. Computer assisted learning and Teaching.

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

# Unit –1

# General conception of Teaching

1. **"शिक्षक को प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का जितना अधिक ज्ञान होता हैं, उतना ही अधिक वह जानता है कि कैसे पढ़ाया जाये" किसने कहा हैं ?**

अ.) स्किनर ब.) मॉण्टेसरी

स.) कोलेसनिक द.) क्रो एवं क्रो

(ब)

2. **शिक्षा मनोविज्ञान के अर्थ का विश्लेषण करने हेतु स्किनर ने तथ्य अंकित किये–**

अ.) शिक्षा मनोविज्ञान का केन्द्र मानव व्यवहार हैं।

ब.) शिक्षा मनोविज्ञान खोज एवं निरीक्षण से प्राप्त किये गए तथ्यों का संग्रह हैं।

स.) शिक्षा मनोविज्ञान में संग्रहित ज्ञान को सिद्धान्तों का रूप प्रदान किया जा सकता हैं।

द.) उपर्युक्त सभी ।

(द)

3. **शिक्षा मनोविज्ञान में किया जाता हैं –**

अ.) बालक की विशेष योग्यताओं का अध्ययन

ब.) बालक के वंशानुक्रम व वातावरण का अध्ययन

स.) बालक की व्यक्तिगत विभिन्नताओं का अध्ययन

द.) उपर्युक्त सभी

(द)

4. **"शिक्षकों को अपने शिक्षण में उन सभी मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रयोग करने के लिए तैयार रहना चाहिए जो सफल शिक्षण और प्रभावशाली अधिगम हेतु अनिवार्य है" किसका कथन हैं–**

अ.) स्किनर ब.) मेलवी स.) एलिस क्रो द.) रायबर्न

(स)

5. **"शिक्षा मनोविज्ञान अध्यापकों की तैयारी की आधारशिला हैं" यह कथन हैं –**

अ.) स्किनर ब.) प्लेटों का स.) बी.एन. झा द.) हरबर्ट

(अ)

6. **शिक्षण से आप क्या समझते हैं ? शिक्षण की कोई उपर्युक्त परिभाषा दीजिए तथा इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालिये ।**

**What do you understand by the term 'teaching' ? Give a suitable definition of teaching and focus on the various characteristics of teaching ?**

उत्तर शिक्षण का अर्थ (Meaning of teaching) – शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षण सबसे प्रमुख हैं। शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया हैं। शिक्षण शब्द शिक्षा से बना हैं जिसका अर्थ हैं ' शिक्षा प्रदान करना'। शिक्षण

के लिए अंग्रेजी शब्द हैं –टीचिंग (teaching) जिसका अर्थ सिखाना, पढ़ाना अर्थात् ज्ञान देना, शिक्षा देना तथा शिक्षार्थी में कुछ क्षमताओं का विकास करना। शिक्षण की प्रक्रिया मानव व्यवहार को परिवर्तित करने की तकनीक हैं अर्थात् शिक्षण का उद्देश्य व्यवहार परिवर्तन हैं।

शिक्षण का संकुचित अर्थ – संकुचित अर्थ में शिक्षण का तात्पर्य बालक को कक्षा में निश्चित समय , निश्चित विधियों, निश्चित स्थान पर पूर्वनियोजित ढंग से शिक्षण दिया जाता हैं इस प्रक्रिया में शिक्षक का स्थान प्रमुख तथा बालक का स्थान गौण हो जाता हैं।

शिक्षण का व्यापक अर्थ – वस्तुतः शिक्षण मनुष्य के जीवन में निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया हैं उसे अपने पर्यावरण से किसी न किसी रूप में शिक्षण प्राप्त होता रहता हैं।

शिक्षण एक द्विमुखी प्रक्रिया – 'एडम्स' ने शिक्षा को एक द्विमुखी प्रक्रिया माना हैं इस प्रक्रिया में शिक्षक का स्थान प्रमुख तथा शिक्षार्थी का स्थान गौण हैं अर्थात् शिक्षण शिक्षक केन्द्रित हो गया।

शिक्षण एक त्रिमुखी प्रक्रिया – 'जान डीवी' के अनुसार शिक्षा की प्रक्रिया त्रिमुखी हैं रॉयबर्न ने भी शिक्षण की प्रक्रिया को त्रिमुखी बताया हैं।

रायबर्न के अनुसार " शिक्षा में तीन केन्द्र बिन्दु हैं – शिक्षक, शिक्षार्थी और विषयवस्तु। 'शिक्षण' इन तीनो में स्थापित किया जाने वाला सम्बन्ध हैं।

**<u>शिक्षण की परिभाषाएं</u>**

**<u>बी.ओ. स्मिथ</u>** – " शिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया हैं जिसका सम्पादन अन्तः पारस्परिक सम्बन्धों के माध्यम से अधिगम को बढ़ाना होता हैं।

**<u>एमीडन</u>** – " शिक्षण वह अन्तः पारस्परिक सम्बन्ध हैं जिसमें मुख्य रूप से कक्षा–कक्ष वार्ताए शिक्षक एवं छात्रों के बीच होती हैं एवं जो सुनिश्चित क्रियाओं के मध्य सम्पादित होती हैं"।

**जैक्सन** –" शिक्षण दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच आमने सामने की प्रक्रिया हैं जिसमें एक व्यक्ति (शिक्षक) दूसरे प्रतिभागियों विद्यार्थियों में विशेष परिवर्तन लाने की इच्छा रखता हैं"

Little Oxford Dictionary ज्ञान प्राप्त करना, विकास करना अनुदेशन देना, पाठ पढ़ाना तथा उन्हें उत्साहित करना शिक्षण हैं।

**<u>शिक्षण की विशेषताएं</u>**

एक अच्छे शिक्षण की विशेषताएं प्रभावशाली शिक्षक के गुणों से सम्बन्धित होती हैं एक प्रभावशाली शिक्षण की विशेषताएं

I. शिक्षक की योग्यता
II. शिक्षण कुशलता
III. शिक्षक की उपलब्धियों पर परिलक्षित होती हैं जो इस प्रकार हैं–



GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

1. यह सुनियोजित होता हैं एवं इसका अध्ययन व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध रूप में किया जाता हैं।
2. यह सोद्देश्य एवं द्विपक्षीय होता हैं।
3. प्रोत्साहन देने वाला एवं प्रजातांत्रिक होता हैं।
4. संवोगात्मक स्थिरता प्रदान करने वाला होता हैं।
5. यह छात्र की मनोशारीरिक क्षमताओं के अनुरूप होता हैं।
6. अच्छा शिक्षण पर्यावरण के साथ अनुकूलन करने वाला होता हैं।
7. यह निदानात्मक एवं उपचारात्मक होता हैं।
8. यह पूर्व ज्ञान पर आधारित होता हैं।
9. अच्छे शिक्षण में अध्यापक, एक मित्र, दार्शनिक तथा पथप्रदर्शक के रूप में तथा छात्र अध्ययन–अध्यापन क्रिया के सक्रिय कार्यकर्त्ता के रूप में कार्य करता हैं।
10. जीवनोपयोगी ज्ञान प्रदान करने में सहायक होता हैं।
11. इसमें अध्यापक का कक्षा व्यवहार प्रत्यक्ष की अपेक्षा अप्रत्यक्ष अधिक होता हैं।
12. इसमें जनतन्त्रात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाता हैं।
13. अच्छा शिक्षण छात्रों में सृजनात्मकता का विकास करता हैं।
14. यह सीखने के प्रति रोचकता व प्रभावोत्पादकता प्रदान करता हैं।
15. यह सुझावात्मक होता हैं।
16. यह ज्ञान का मूल्याकंन करता हैं।
17. यह छात्रों में आत्मविश्वास उत्पन्न करता हैं।
18. छात्रों के सर्वागींण विकास पर बल देता हैं ।
19. इसमें छात्रों की क्रियाओं को समुचित पुनर्बलित किया जाता हैं।
20. अच्छा शिक्षण शिक्षक शिक्षार्थी के बीच मधुर सम्बन्ध स्थापित करता हैं।

**7. अधिगम का अर्थ स्पष्ट करते हुए शिक्षण तथा अधिगम के सम्बन्धों की चर्चा कीजिए ।**
**Discuss the meaning of learning and its relationship with teaching ?**

**उत्तर** प्राणी जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त नये–नये अनुभव प्राप्त करता रहता हैं तथा इन अनुभवों के अपने व्यवहारों को वह सुधारता रहता हैं उदाहरण के लिए छोटा बच्चा किसी गर्म वस्तु को पकड़ने से जलन का अनुभव करता हैं यह उसके लिए एक अनुभव हैं आगे वह गर्म चीजों नहीं पकड़ेगा या सावधानी से पकड़ेगा। गर्म चीज को पकड़ने के सम्बन्ध में उसके व्यवहारों में जो परिवर्तन हुआ हैं वही अधिगम कहलाता हैं इस दृष्टिकोण से हम अनुभवों से लाभ उठाने को अधिगम कह सकते हैं। व्यवहारों में सुधार को लेकर यदि अधिगम की परिभाषा करे तो हम कह सकते हैं कि ''व्यवहारों का परिमार्जन ही अधिगम हैं''

शिक्षण तथा अधिगम में घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। वैसे यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक शिक्षण से अधिगम हो ही किन्तु इतना निश्चित है कि प्रत्येक शिक्षण का मूल एवं एकमात्र अन्तिम उद्देश्य अधिगम होता हैं। उद्देश्य की दृष्टि से देखे तो कह सकते है कि शिक्षण साधन हैं एवं अधिगम साध्य हैं। एक प्रक्रिया हैं तो दूसरा उसका परिणाम हैं। इस प्रकार शिक्षण एवं अधिगम एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। कक्षा के छात्रों का जो पूर्व अधिगम होता हैं उसी को आधार बनाकर अपने शिक्षण का आयोजन करता हैं

छात्रों के पूर्व अनुभवों की जैसी स्थिति तथा अवस्था होगी शिक्षण का स्तर तथा गति तदनुसार ही करनी होगी। इतना ही नहीं  शिक्षक को उसी के अनुरूप शिक्षण प्रविधिया तथा नीतियाँ प्रयोग करनी होगी ।

शिक्षण सिद्धान्तों का विकास अधिगम सिद्धान्तों के आधार पर होता हैं शिक्षण तथा अधिगम के इन सिद्धान्तों के मध्य परस्पर आधार के कारण भी शिक्षण तथा अधिगम में सम्बन्ध बढ़ जाते हैं। वास्तव में शिक्षण अधिगम परिस्थितियों का व्यवस्थीकरण हैं।

शिक्षण तथा अधिगम का आधार – शिक्षा मनोविज्ञान हैं । शिक्षण तथा अधिगम दोनो ही अपने–अपने सिद्धान्तों को निरूपण मनोविज्ञान के सिद्धान्तो के आधार पर करते हैं। मनोविज्ञान पर आधारित होने के कारण ही शिक्षण तथा अधिगम में परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट होता हैं।
उपरोक्त विवेचन से शिक्षण तथा अधिगम के मध्य परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट होता हैं। इन दोनो के मध्य इतने प्रगाढ़ सम्बन्ध होते हुए भी दोनो में कुछ आधारभूत अन्तर हैं–

1. अधिगम का क्षेत्र व्यापक हैं जब कि शिक्षण में इतनी व्यापकता नहीं हैं।
2. शिक्षण ही अधिगम का एकमात्र साधन नहीं हैं। प्राणी शिक्षण के अलावा अपने अनुभव, ज्ञानेन्द्रियों, अनुकरण , अन्तदृष्टि आदि से भी अधिगम प्राप्त करता हैं।
3. शिक्षण प्रणाली व्यक्तित्व के केवल एक अंश को ही प्रभावित करती हैं जबकि अधिगम का प्रभाव सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर पड़ता हैं।
4. शिक्षण सदैव औपचारिक होता हैं जबकि अधिगम औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनो ही प्रकार का होता हैं।
5. शिक्षण एक कार्य व्यवस्था हैं तो अधिगम उसका परिणाम हैं। शिक्षण एक सामाजिक कार्य हैं जबकि अधिगम व्यक्तिगत कार्य हैं।
6. शिक्षण कार्य परक प्रक्रिया हैं। जबकि अधिगम निष्पतिपरक प्रक्रिया हैं।

**शिक्षण –अधिगम प्रक्रिया का शिक्षा में योगदान**

1. यह नवीन अधिगम पर बल देती हैं
2. शिक्षा को द्विमुखी प्रक्रिया की अन्तः क्रिया के रूप में स्वीकार करती हैं।
3. शिक्षण के अनेक प्रारूप विकसित हुए हैं।
4. बालकों के गुणो का अधिगम में उपयोग किया जाता हैं।
5. अनेक नवीन प्रत्ययों का विकास इसके द्वारा होता हैं।
6. सीखने की दशाओं में भी परिवर्तन आया हैं। अधिगम हेतु परिपक्वता पर ध्यान दिया जाने लगा हैं।
7. अनेक प्रकार के शैक्षिक अविष्कार हुए हैं।
8. अभिप्रेरणा की आन्तरिक रचना, योग्यता तथा उद्दीपन में भी अन्तर आया हैं।
9. अधिगम की विभिन्न शैलिया विकसित हुई हैं।
10. शैक्षिक लक्ष्यों को स्पष्ट रूप से निर्धारित किया जाने लगा हैं।
11. सार्थक अधिगम पर बल दिया जाने लगा हैं।

8. **शिक्षण की प्रकृति/स्वरूप की व्याख्या कीजिए एवं शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारको को स्पष्ट कीजिए ।**

**Explain the nature of teaching and clarify factors affecting to teaching ?**

**उत्तर** शिक्षण को कला तथा विज्ञान दोनो रूपों में स्वीकार किया गया हैं। पेन्टन ने शिक्षा को कला कहा है। शिक्षण को कला के रूप में स्वीकार करने की झलक हमें प्राचीन दृष्टिकोण में मिलती हैं। आधुनिक दृष्टिकोण में शिक्षण को विज्ञान माना गया हैं, क्यों कि विज्ञान की तरह इसका व्यवस्थित रूप से अध्ययन किया जा सकता हैं। इसमे कार्य कारण संबंध स्थापित किये जा सकते हैं। शिक्षण की क्रियाओं तथा शिक्षक व्यवहार का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण किया जा सकता हैं नवीनतम शिक्षण तकनीकी के विकास से छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाया जा सकता हैं।

शिक्षण की प्रकृति में निम्नलिखित बिन्दू सम्मिलित हैं –

1. शिक्षण भाषागत प्रक्रिया
2. शिक्षण एक विकासात्मक प्रक्रिया हैं (ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक)
3. शिक्षण शिक्षक तथा छात्र के बीच आमने–सामने बैठकर चलने वाली प्रक्रिया हैं।
4. शिक्षक एक मनोवैज्ञानिक सामाजिक और व्यावसायिक प्रक्रिया हैं।
5. शिक्षण की प्रकृति निदानात्मक एवं उपचारात्मक हैं।
6. शिक्षण एक त्रिध्रुवीय या त्रिकोणात्मक प्रक्रिया हैं।
7. शिक्षण एक निर्देशन अन्तः प्रक्रिया हैं।
8. शिक्षण एक तार्किक क्रिया, शिक्षण का नियोजन शिक्षक की तर्क शक्ति पर आधारित होता हैं। पाठ्यवस्तु का विश्लेषण तथा संश्लेषण तर्क शक्ति के द्वारा ही किया जाता हैं यह एक तार्किक क्रिया हैं
9. शिक्षण एक औपचारिक तथा अनौपचारिक प्रक्रिया हैं।
10. पृष्ठ पोषण या प्रतिपृष्टि की प्रविधियों के द्वारा शिक्षण में अपेक्षित सुधार भी किया जाता है।
11. शिक्षण नियोजन तथा मूल्यांकन क्रियाओं की प्रकृति वैज्ञानिक अधिक है जबकि शिक्षण का प्रक्रिया पक्ष कलात्मक हैं।
12. शिक्षण जीवन की तैयारी का साधन हैं।
13. शिक्षण पर्यावरण के प्रति प्रतिक्रिया करने में सहायक है।
14. प्रशिक्षण से लेकर अनुमोदन तक शिक्षण एक सतत् प्रक्रिया हैं।

**शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारक** – शिक्षण एक अन्तःक्रिया एवं सोद्देश्य प्रक्रिया हैं जो छात्रों के व्यवहार में एक निश्चित प्रकार के व्यवहारों को लाने के लिए सम्पादित की जाती हैं। शिक्षण प्रक्रिया अनेक कारकों से प्रभावित होती हैं इन कारकों या तत्वों में से कुछ प्रमुख कारक निम्न हैं–

1. शैक्षिक उद्देश्य – शिक्षण के कुछ सुनिश्चित अधिगम उद्देश्य होते हैं। जैसे–ज्ञानात्मक, अवबोधात्मक कौशलात्मक, ज्ञानोपयोगात्मक तथा श्लाघात्मक आदि । अपेक्षित उद्देश्य के लिए पृथक–पृथक प्रकार का शिक्षण होगा।
2. छात्रों का मनोशारीरिक स्तर



GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

3. व्यक्तिगत विभिन्नताएं
4. विषयवस्तु का स्वरूप व स्तर
5. भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता
6. कक्षा का वातावरण
7. शिक्षक की योग्यताएं
8. शिक्षण क्रिया का नियोजन
9. स्वाध्याय की आदत
10. शिक्षण –प्रविधि एवं बाल केन्द्रिता
11. पाठ्यवस्तु की उपयोगिता
12. मूल्यांकन –परिणाम
13. संस्था का वातावरण
14. अध्यापक का व्यक्तित्व
15. पाठ्यक्रम
16. छात्रों तथा शिक्षकों के मूल्यांकन द्वारा अपनी उपलब्धियों का ज्ञान

**अच्छे शिक्षण की व्यवस्था –**

अच्छे शिक्षण की व्यवस्था करते समय निम्न सोपानों का अनुसरण किया जाना चाहिए। शिक्षण पूर्व कार्य को निदानात्मक शिक्षण मध्य कार्य को उपचारात्मक, शिक्षणोपरान्त कार्य को मूल्यांकन का सोपान भी कहा जा सकता हैं।

**शिक्षण के सोपान** – शिक्षण पूर्व कार्य (निदानात्मक सोपान)

i. उद्देश्यों का निर्धारण
ii. विषयवस्तु के सम्बन्ध में निर्णय लेना
iii. विषयवस्तु के प्रस्तुतिकरण के आदर्शो और शैलियों को क्रमानुसार आयोजित करना।
iv. शिक्षण विधियों का वितरण या प्रयोग

**शिक्षण मध्य कार्य (उपचारात्मक सोपान)**

i. कक्षा का सूक्ष्म सर्वेक्षण
ii. विद्यार्थियों का निदान
iii. शिक्षण कार्य या उपलब्धि या प्रतिक्रिया

(क) प्रेरक वस्तुओं का चयन
(ख) प्रस्तुतिकरण
(ग) शिक्षण विधियों का चुनाव
(घ) शिक्षण विधियों का उपयोग
(च) पुनर्बलन देना

For free study notes log on: www.gurukpo.com

शिक्षणोंपरान्त कार्य (मूल्यांकन सोपान)

1. व्यवहार में आए हुए परिवर्तनों के सही आयामों को परिभाषित करना।
2. मूल्यांकन की विभिन्न विधियों का प्रयोग
3. शिक्षण विधियों में परिवर्तन

**9. शिक्षण का अभिवृति व्यवहार अन्तःक्रिया प्रतिमान क्या हैं ? शिक्षण के इस प्रतिमान की आवश्यकता की व्याख्या कीजिए ।**

**What is aptitude treatment instruction model of teaching ? explain the need of this model in teaching .**

**उत्तर** राबर्ट ग्लेशर (1962) का बुनियादी शिक्षण प्रतिमान एक मनोवैज्ञानिक प्रतिमान हैं उसने अपने प्रतिमान को अनुदेशनात्मक पद्धति (Instructional system) का नाम दिया हैं। ब्रूस आर. जुआइस ने इसे कक्षा सभा प्रतिमान का नाम दिया और प्रतिमानों के व्यक्तिगत वर्ग में सम्मिलित किया हैं। इस शिक्षण प्रतिमान को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया गया हैं।

1. **अनुदेशनात्मक** – अनुदेशनात्मक लक्ष्यों से आशय उन क्रियाओं से होता हैं जो शिक्षण प्रारम्भ करने से पूर्व निर्धारित किये जाते हैं इन उद्देश्यों को शिक्षक ही निर्धारित करता हैं।
2. **पूर्व व्यवहार** – शिक्षण प्रारम्भ होने से पूर्व छात्रों के व्यवहार के पूर्व स्तर को पूर्व व्यवहार कहा जाता हैं। वास्तव में शिक्षण प्रारम्भ करने से पूर्व छात्रों के पूर्व व्यवहार का मापन करना आवश्यक होता हैं जिसके आधार पर छात्रों की क्रियाओं को निर्देशित आधार प्रदान करता हैं।
3. **अनुदेशनात्मक प्रक्रिया** – यह वह क्रियाएं है जो पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतिकरण के लिए प्रयुक्त की जाती हैं। लक्ष्य निर्धारण एवं पूर्व व्यवहार के माध्यम से अनुदेशनात्मक प्रक्रिया का संचालन होता हैं। इस प्रक्रिया में शिक्षक उचित शैक्षिक वातावरण उत्पन्न कर विभिन्न शिक्षण युक्तियों एवं अपने व्यवहार के आधार पर छात्रों का अधिकतम ज्ञान के द्वारा विभिन्न कौशल सिद्धान्त, अवधारणाएं एवं समस्या समाधान की युक्तियों का ज्ञान कराता हैं। जिससे अनुदेशनात्मक लक्ष्यों की अधिकतम प्राप्ति हो जाये।

4. **निष्पति मूल्यांकन** – निष्पति मूल्यांकन के आधार पर शिक्षक छात्रों द्वारा प्राप्त ज्ञान एवं कौशल की मात्रा का मापन करता हैं। इस तत्व से प्रत्येक अन्य तीनो तत्वों का भी पृष्ठपोषण मिलता हैं। यदि शिक्षक देखता है कि छात्रों को विषयवस्तु का स्वामित्व नहीं मिला हैं तो वह उस प्रक्रिया तत्वों में सुधार की कोशिश करता हैं।

5. **कम्प्यूटर आधारित शिक्षण प्रतिमान** –कम्प्यूटर पर आधारित शिक्षण प्रतिमान का विकास लारेन्स स्टोलुरो तथा डेनियल डेविस ने 1965 ई0 में किया। इस शिक्षण प्रतिमान में शिक्षक का स्थान निर्णय लेने व वास्तविक निर्देश देने में कम्प्यूटर ले लेता हैं।

**इस शिक्षण प्रतिमान के दो स्वरूप होते हैं –**

**पूर्व निर्देशित अवस्था** – पूर्व निर्देशित अवस्था में छात्र विशेष के लिए विशेष शैक्षिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिये शिक्षण प्रोग्राम का चयन करता हैं
निर्देशित अवस्था – छात्र के पूर्व व्यवहार तथा उद्देश्यों के अनुरूप कम्प्यूटर शिक्षण योजना को चुनकर प्रस्तुत करता हैं। छात्रों की क्रियाओं को निर्देशित किया जाता हैं। छात्रों की निष्पतियों का निरीक्षण किया जाता हैं।अपेक्षित उपलब्धियों होने पर दूसरी शिक्षण योजना प्रस्तुत की जाती हैं।

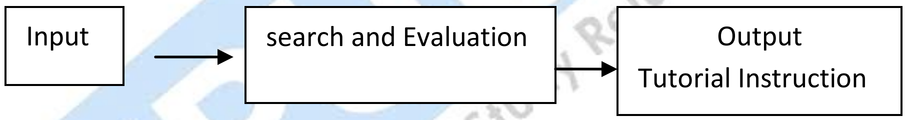


कम्प्यूटर आधारित शिक्षण प्रतिमान :– इस शिक्षण प्रतिमान में शिक्षण तथा निदान दोनो क्रियाएं एक साथ होती हैं। निदान के आधार पर उपचारात्मक अनुदेशन भी दिया जाता हैं। यह प्रतिमान व्यक्तिगत भिन्नता की आवश्यकताओं के लिए समान अवसर प्रदान करता हैं।

अन्तः प्रक्रिया शिक्षण प्रतिमान – इस प्रतिमान को सामाजिक अन्तःक्रिया प्रतिमान भी कहते हैं इस प्रतिमान का विकास फलैण्डर्स ने किया। इसमें शिक्षक तथा छात्रों के स्वोपक्रम तथा अनुक्रिया के प्रवाह का निरीक्षण किया जाता हैं। उसने अध्यापक एवं छात्रों की क्रियाओं को दस श्रेणियों में विभक्त किया हैं।

इस प्रतिमान में शिक्षक छात्र के शाब्दिक अन्तः प्रक्रिया को महत्व दिया जाता हैं इसमें अशाब्दिक अन्तःप्रक्रिया का निरीक्षण नहीं होता। पाठ्यवस्तु के सम्बन्ध में कोई निर्णय नहीं किया जाता हैं। यह प्रतिमान शिक्षक के कक्षागत व्यवहार में सुधार लाने का मुख्य साधना हैं।
**बुनियादी शिक्षण प्रतिमान का स्वरूप :–** इस प्रतिमान में निष्पति का मूल्यांकन, उद्देश्यों छात्रों के व्यवहार तथा शिक्षक को पुनर्बलन प्रदान करता हैं।

1. अनुदेशनात्मक उद्देश्यों से तात्पर्य उन क्रियाओं से हैं । जो छात्रों को शिक्षण के पूर्व करनी चाहिए। इसे ज्ञानार्जन भी कहां जाता हैं।
2. पूर्व व्यवहार से तात्पर्य छात्रों की उन योग्यताओं अथवा व्यवहारों से हैं जो पाठ्यवस्तु की बोधगम्यता के लिए आवश्यक हैं।
3. अनुदेशनात्मक प्रक्रिया से तात्पर्य शिक्षण की उन क्रियाओं से हैं जो पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतिकरण के लिए प्रयुक्त की जाती है।
4. निष्पति परीक्षा से तात्पर्य परीक्षा तक निरीक्षण विधियों से हैं जिनके आधार पर शिक्षक निर्णय लेता है कि कहां तक छात्रों को विषयवस्तु का स्वामित्व प्राप्त हो सका हैं। यदि अपेक्षित स्वामित्व स्तर प्राप्त नहीं हुआ हैं तो पूर्व तीनों अथवा किसी एक के अभाव के कारण हुआ हैं। उसमें सुधार लाना चाहिए।

**10. फलैण्डर्स की अन्तःक्रिया वर्ग प्रणाली को स्पष्ट कीजिए –**
**Explain the Flanders interaction category system -**

**उत्तर** अन्तःक्रिया विश्लेषण के लिए फलैण्डर्स का नाम अधिक प्रसिद्ध हैं। फलैण्डर्स ने इस विधि का निर्माण शिक्षक–प्रभाव और छात्र–निष्पति के शोध के लिए किया था। यह प्रविधि विशेष रूप से कक्षा के शाब्दिक तथा कक्षागत सम्प्रेक्षण के लिए प्रयुक्त की जाती हैं। शिक्षक तथा छात्रों के मध्य अशाब्दिक व्यवहारों की अपेक्षा शाब्दिक व्यवहारों की प्रधानता रहती हैं। फलैण्डर्स की यह अवधारणा हैं कि कक्षा का शाब्दिक व्यवहार सम्पूर्ण कक्षा व्यवहार का प्रतिनिधित्व करता हैं । शाब्दिक व्यवहार का निरीक्षण अधिक विश्वसनीयता के साथ किया जा सकता हैं।

फलैण्डर्स ने अपने सहयोगियों के साथ मिनेसोटा विश्वविद्यालय में (1955–60) इस वर्ग प्रणाली का विकास किया। इस प्रविधि की सहायता से तीन सैकण्ड या इससे भी कम समय में होने वाली घटना का भी निरीक्षण क्रमबद्ध रूप से किया जाता हैं। यह एक वस्तुनिष्ठ तथा वैज्ञानिक निरीक्षण प्रविधि मानी जाती हैं।

इस वर्ग प्रविधि की मुख्य विशेषता दो या दो व्यक्तियों के मध्य से स्वोपक्रम (initiation) तथा अनुक्रिया (response ) का निरीक्षण करना हैं।

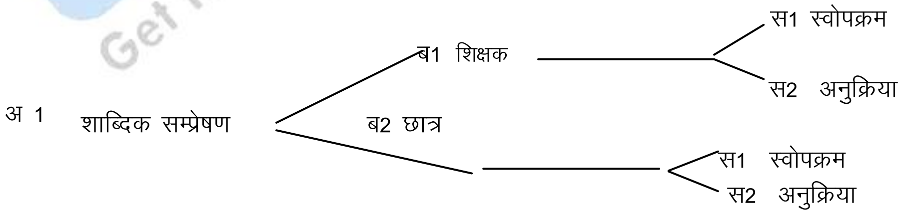

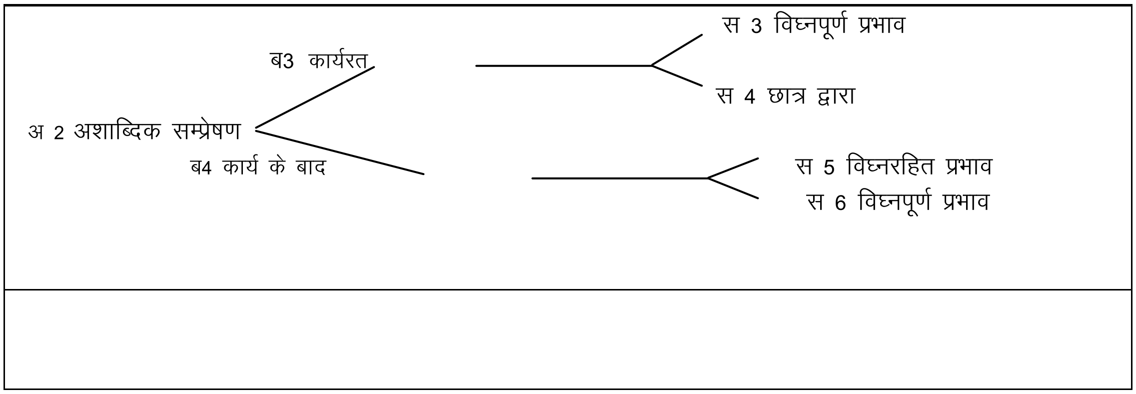


कक्षा में शिक्षक अधिकांश रूप से स्वोपक्रम (initiation) करता हैं और छात्र अनुक्रिया (response) करता हैं जब छात्र स्वोपक्रम करता हैं तब शिक्षक अनुक्रिया करता हैं इस प्रकार शाब्दिक कथन (स्वोपक्रम तथा अनुक्रिया) तथा मौन अथवा विभ्रान्ति (कोई भी नहीं अथवा दोनों ही क्रियाएं) को लिया हैं साधारणतः शिक्षक कथन स्वतन्त्र व्यवहार चर माना जाता हैं जबकि छात्र कथन को आश्रित चर (dependent variable ) माना जाता हैं। इन दोनो चरों का सन्तुलन शिक्षण विधि, कक्षा का स्तर, पाठ्यवस्तु तथा शिक्षण परिस्थिति के अनुसार बदलता रहता हैं। इस प्रकार यह दस वर्ग प्रविधि कुछ आधारभूत अवधारणाओं को अपनाती हैं।

## आधारभूत अवधारणाएँ

**फलैण्डर्स की दस वर्ग प्रविधि की निम्नलिखित आधारभूत अवधारणाए हैं–**

1. सामान्यतः कक्षा शिक्षण में शाब्दिक व्यवहार की प्रधानता होती हैं। अधिकांश समय में कक्षा में कोई बोलता हैं।
2. यद्यपि कक्षा में शाब्दिक व्यवहार के साथ अशाब्दिक व्यवहार भी होता हैं परन्तु शाब्दिक व्यवहार का विश्वसनीयता के साथ निरीक्षण किया जा सकता हैं तथा कक्षा के सम्पूर्ण व्यवहार का शुद्ध प्रतिनिधित्व करता हैं ।
3. छात्रों पर शिक्षक का प्रभाव अधिक होता हैं। छात्र व्यवहार शिक्षक व्यवहार से प्रभावित होता हैं।
4. विशेष रूप से शिक्षक का कक्षागत व्यवहार छात्रों को अधिक प्रभावित करता हैं।
5. शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक–छात्र का सम्बन्ध एक महत्वपूर्ण तत्व होता हैं।
6. कक्षा का प्रजातान्त्रिक वातावरण छात्रों के उच्च स्तरीय निष्पतियों को प्रोत्साहित करता हैं।
7. शिक्षक के प्रजातान्त्रिक व्यवहार को छात्र अधिक पसन्द करते हैं और प्रशंसा करते हैं।
8. अधिगम की प्रक्रिया में कक्षा का वातावरण महत्त्वपूर्ण स्थान रखता हैं।
9. शिक्षक के कक्षागत शाब्दिक व्यवहार का निरीक्षण वस्तुनिष्ठ रूप में किया जा सकता हैं।
10. इस प्रविधि को शिक्षक व्यवहार के सुधार और परिवर्तन में पृष्ठ पोषण प्रविधि के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता हैं।

**फलैण्डर्स दस वर्ग प्रणाली** – फलैण्डर्स ने इस प्रविधि में कक्षा में होने वाले सभी शाब्दिक व्यवहारों को वर्गीकरण करने का प्रयास किया हैं। सभी क्रियाओं को दो भागों में विभाजित किया जाता हैं।

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries

(1) शिक्षक कथन (2) छात्र कथन । एक तीसरा प्रकार भी हैं जिसमें ये दोनो प्रकार नहीं आते हैं जिसे (3) मौन या विभ्रान्ति कहते हैं। शिक्षक कथन –इसमें उन सभी शाब्दिक व्यवहारों को सम्मिलित किया जाता हैं जो शिक्षक (स्वोपक्रम तथा अनुक्रिया) द्वारा सम्पादित किये जाते हैं
फलैण्डर्स ने शिक्षक कथन को दो भागों में विभाजित किया हैं प्रत्यक्ष व्यवहार तथा अप्रत्यक्ष व्यवहार। यह वर्गीकरण छात्रों को कक्षा में स्वतन्त्रता देने के आधार पर किया गया हैं। प्रत्यक्ष व्यवहार में शिक्षक छात्रों को कम स्वतन्त्रता देता हैं और स्वंय अधिक क्रियाशील रहता हैं जबकि अप्रत्यक्ष व्यवहार में शिक्षक छात्रों को अधिक स्वतन्त्रता देता हैं और छात्र कक्षा में अधिक क्रियाशील रहते हैं। शिक्षक के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष व्यवहारों को भी वर्गो में विभाजित किया गया हैं। अप्रत्यक्ष व्यवहार को चार वर्गो में विभाजित किया है– प्रथम वर्ग छात्रों की अनुभूति को स्वीकार करना, द्वितीय वर्ग–प्रशंसा तथा प्रोत्साहित करना, तृतीय वर्ग– छात्रों को स्वीकार करना और अपने भाषण में प्रयुक्त करना तथा चतुर्थ वर्ग –प्रश्न पूछना।
प्रत्यक्ष व्यवहार को तीन वर्गो में विभाजित किया गया हैं– पंचम वर्ग व्याख्यान देना, षष्टम् वर्ग निर्देशन देना तथा सप्तम वर्ग – आलोचना करना व अधिकार दिखना।
(अ) अप्रत्यक्ष शिक्षक व्यवहार –शिक्षक की वे सभी अनुक्रियाएं सम्मिलित की जाती हैं जो अप्रत्यक्ष रूप से छात्रों के व्यवहार को अनुक्रिया के लिए प्रोत्साहित करती हैं जैसे– छात्रों की अनुभूति को स्वीकार करना, प्रशंसा करना, छात्रों के विचारो का अपने व्याख्यान में प्रस्तुत करना तथा प्रश्न पूछना आदि।

वर्ग 1– छात्रों की अनुभूति को स्वीकार करना – इस वर्ग में शिक्षक की वे सभी अनुक्रियाए आती हैं जिनमें छात्रों की अनुभूतियों को स्वीकार किया जाता हैं। शिक्षक यह मानता है कि छात्रों को इस प्रकार की भावनाएं रखने तथा कक्षा में अभिव्यक्त करने का अधिकार हैं। इस वर्ग में वे कथन भी आते हैं जो भूतकालीन भावनाओं का प्रत्यास्मरण कराते हैं चाहे उनके प्रत्यास्मरण से सुख की अनुभूति हो अथवा दुःख की।

वर्ग 2– प्रशंसा करना व प्रोत्साहित करना– प्रशंसा तथा प्रोत्साहन में छात्र व्यवहार तथा कार्य स्वीकृति के लिए कथन भी सम्मिलित होते हैं साधारणतः प्रशंसा के लिए अच्छा, ठीक, सुन्दर, शाबास आदि शब्द प्रयुक्त किये जाते हैं। कई बार शिक्षक शाब्दिक प्रशंसा या स्वीकृति प्रदान न करके अशाब्दिक अनुक्रिया से प्रोत्साहित करता हैं जैस गर्दन को हिलाना, हूँ की आवाज करना अनुक्रिया की स्वीकृति को प्रशंसा से प्रोत्साहित किया जाता हैं। छात्रों के अपेक्षित कार्यो के लिए, शिक्षक प्रोत्साहन करने के लिए यह शब्द भी प्रयुक्त करता हैं जारी रखो, आगे बढ़ो और अधिक स्पष्ट का प्रयास करों आदि। इस प्रकार छात्रों में तनाव कम होता हैं और अनुक्रिया तथा व्यवहार करने के लिए उत्साह बढ़ता हैं।

वर्ग 3 – छात्रों के विचारों को स्वीकार करना– इस वर्ग में शिक्षक छात्रों द्वारा व्यक्त किये गये विचारों को स्वीकार करते हैं और उन विचारों को अपने व्यवस्था में प्रयुक्त करता है। छात्रों के विचारो का अपने नवीन विचारों से सम्बन्ध स्थापित करता हैं साधारणतः शिक्षक यह कहते हैं 'अच्छा मैं बतलाता हूँ तुम्हारे कहने का क्या तात्पर्य हैं ? या तुम क्या कहना चाहते हो इस प्रकार छात्रों के कथनों को दोहराते –दोहराते अपनी बात कहने लगता हैं।

वर्ग 4– प्रश्न पूछना जब शिक्षक प्रश्न पूछता हैं या छात्रों के सामने कोई ऐसी समस्या प्रस्तुत करता हैं जिसके समाधान की आशा छात्रों से की जाती है तब वर्ग –4 को अंकित किया जाता हैं प्रश्न छोटे भी हो सकते हैं जो छात्रों के उत्तर को नियन्त्रित करते हैं या वे बहुत बड़े भी हो सकते हैं जिसमें छात्रों को अधिक बोलना पड़ता हैं । सभी प्रकार के प्रश्न वर्ग–4 के अन्तर्गत ही आते हैं। सामान्यतः वर्ग–4 का प्रयोग छात्रों को शिक्षण क्रिया में भाग लेने के लिए किया जाता हैं।
वर्ग–1 से वर्ग 4 तक की शिक्षक की अनुक्रिया तथा स्वोक्रम का उद्देश्य यह होता है कि छात्रों को शिक्षण क्रिया में भाग लेने के लिए अप्रत्यक्ष रूप से प्रोत्साहित करे। इन सभी व्यवहारों को शिक्षक के अप्रत्यक्ष व्यवहार में सम्मिलित किया जाता हैं।

(ब) प्रत्यक्ष शिक्षक व्यवहार

शिक्षक की उन सभी अनुक्रियाए तथा स्वोपक्रम को सम्मिलित किया जाता हैं जो प्रत्यक्ष रूप से छात्रों के व्यवहार को नियन्त्रित करती हैं। जैसे व्याख्यान देना, निर्देश देना, आलोचना करना व अधिकार दिखाना।

वर्ग 5– व्याख्यान देना –व्याख्यान कक्षा शाब्दिक अन्तःक्रिया का वह रूप हैं जिसको शिक्षक अपने विचारों, दृष्टिकोण, तथ्यों एवं सूचनाओं को प्रदान करने के लिए प्रयोग करता हैं । सामग्री का प्रस्तुतीकरण किसी महत्वपूर्ण विषय की भूमिका देने, उसकी समालोचना करने तथा छात्रों का ध्यान केन्द्रित करने के लिए किया जा सकता हैं। पाठ्यवस्तु व्याख्यान के द्वारा अधिक समय तक प्रस्तुत की जाती हैं जब भी शिक्षक किसी तथ्य का उल्लेख करता हैं सूचना देता हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करता हैं सभी अनुक्रियाए वर्ग–5 में अंकित की जाती हैं। कक्षा अन्तःक्रिया में इसका प्रयोग अधिक किया जाता हैं।

वर्ग 6– निर्देश देना – शिक्षक की छात्रों को निर्देश देने की अनुक्रियाओं को वर्ग–6 में सम्मिलित किया जाता हैं किसी कथन को निर्देश या आज्ञा माना जाय या नही यह इस बात पर निर्भर करता हैं कि शिक्षक यह कहता हैं 'तुम बताओ' खड़े हो जाओं, अपना नाम बताओं, अपना कार्य दिखाओं आदि । सभी अनुक्रियाएं वर्ग–6 में आती हैं। इस वर्ग की क्रियाए छात्रों के व्यवहार को प्रत्यक्ष रूप में नियन्त्रित करती हैं।
वर्ग 7 – आलोचना करना तथा अधिकार दिखाना – जब शिक्षक छात्र के अनुचित व्यवहार के लिये किसी आलोचना का प्रयोग करता हैं जब यह कथन इस वर्ग में अंकित किये जाते हैं जैसे शिक्षक का यह कहना 'यह मुझे पसन्द नहीं', मैं तुम्हे कक्षा से बाहर निकाल दूंगा', 'कक्षा से बाहर निकल जाओ' यह बलपूर्वक कहता हैं : शान्त हो जाओ, आपस में बातचीत मत करो।

(स) छात्र कथन – छात्र कथन को दो भागों में विभाजित किया गया हैं प्रथम छात्र कथन अनुक्रिया छात्र शिक्षक के प्रश्न पूछने तथा निर्देशन देने पर अनुक्रिया करता हैं उन्हें छात्र कथन अनुक्रिया कहते हैं।

वर्ग 8 – छात्र कथन अनुक्रिया – जब शिक्षक छात्र से प्रश्न पूछता है और छात्र प्रश्न का उत्तर देते हैं अथवा शिक्षक द्वारा दिये गये निर्देशों के प्रति शाब्दिक–प्रतिक्रिया करते हैं। इन सभी क्रियाओं को इस वर्ग में अंकित किया जाता हैं। छात्र का कोई कथन या क्रिया जो शिक्षक द्वारा दिये गये उद्दीपन के लिए करता हैं वह सभी इसी वर्ग में आते हैं।

वर्ग 9 छात्र कथन स्वोपक्रम – जब छात्र स्वंय ही प्रश्न पूछने अथवा कुछ कहने के लिए उत्सुक होते हैं तब उन व्यवहारों को वर्ग –9 में अंकित किया जाता हैं छात्रों के विचारों की अभिव्यक्ति इसी वर्ग में सम्मिलित की जाती हैं। कभी–कभी वर्ग 8 तथा वर्ग 9 में अन्तर करना कठिन हो जाता हैं। जब छात्र शिक्षक द्वारा पूछे गये प्रश्न का उत्तर उतना ही दे जितना आवश्यक हैं तब इस व्यवहार को वर्ग –8 में अंकित किया जाता हैं यदि छात्र प्रश्न का आवश्यक उत्तर देने के बाद अपने विचारो को भी व्यक्त करता हैं तब उसे वर्ग–9 में अंकित किया जाता हैं जब शिक्षक छात्रों की अनुक्रिया तथा स्वोपक्रम की प्रशंसा करता है और उन्हें प्रोत्साहित करता हैं।

वर्ग 10–मौन या विभ्रान्ति – कक्षा में जब भी किसी प्रकार की मौन या विभ्रान्ति की स्थिति हो तब वर्ग 10 को अंकित किया जाता हैं अनेक बार कक्षा में ऐसी परिस्थितियां भी उत्पन्न हो जाती हैं जब सभी छात्र एक साथ बोलने लगते हैं और निरीक्षक यह निर्णय नहीं कर पाता कि कक्षा में कौन बोल रहा है। कभी–कभी ऐसी परिस्थितियां भी उत्पन्न हो जाती हैं कि कोई भी नहीं बोलता हैं अर्थात किसी भी प्रकार की शाब्दिक अन्तःक्रिया नहीं होती हैं। इन दोनो ही परिस्थितियों को वर्ग 10 (मौन /विभ्रान्ति) में अंकित किया जाता हैं।

इस वर्ग में उन सभी परिस्थितियों को सम्मिलित किया जाता हैं जो शिक्षक कथन तथा छात्र कथन के अन्तर्गत नहीं आती हैं । शिक्षण प्रभावशीलता की दृष्टि से वर्ग–10 की अधिकता को अच्छा नहीं माना जाता।

**11. गैने द्वारा दिये गये अधिगम के प्रकारो की चर्चा कीजिए।**
**Discuss the kinds of learning as given by gagne.**

**उत्तर** आधुनिक अनुदेशन सिद्धान्तों का जनक राबर्ट गेने को माना जाता हैं। जिन्होने सर्वप्रथम अपने विचार रखे बाद में ब्रूनर तथा कारौल ने गेने के विचारो से सहमत होकर अपने–अपने सिद्धान्त विकसित किये। राबर्ट एम. गेने अधिगम के स्वरूप के स्पष्टीकरण के लिए अधिगम के विभिन्न सिद्धान्तों के विश्लेषण को पर्याप्त नहीं समझते हैं उनके अनुसार कोई भी सिद्धान्त अधिगम की प्रक्रिया का पूर्ण समाधान करने में असमर्थ है। वस्तुतः अधिगम के स्वरूप को वास्तविक रूप से समझने के लिए हमें अधिगम परिस्थितियों का निरीक्षण, परीक्षण एवं उनकी व्याख्या करनी पड़ेगी। साथ ही इनका यह भी तात्पर्य हैं कि किसी एक प्रकार के व्यवहार के अधिगम के लिए पूर्व आवश्यकताओं की आवश्यकता होती हैं इस प्रकार गेने द्वारा वर्णित आठ अधिगम प्रकारों को एक–दूसरे की परम आवश्यकता हैं अर्थात यदि अधिगम के दूसरे प्रकार की जानकारी प्राप्त करनी है तो अधिगम के पहले प्रकार (परिस्थिति) का ज्ञान अपेक्षित हैं। दूसरे शब्दों में इसको यह भी कहा जा सकता है। प्रत्येक नवीन अधिगम के पूर्व उससे निम्न स्तर वाला अधिगम आवश्यक है और यही इस स्तर के अधिगम की पूर्वापेक्षित योग्यता होती है अधिगम के दौरान अधिगमकर्ता (विद्यार्थी) कोई नया अन्तिम व्यवहार उस समय तक अर्जित नहीं कर सकता हैं जब तक कि वह पूर्वापेक्षित

योग्यताएँ विकसित नहीं कर लेता हैं जब तक कि वह पूर्वापेक्षित योग्यताएँ विकसित नहीं कर लेता। उदाहरण के लिए 'बोध उद्देश्य' के लिए ज्ञान उद्देश्य की पूर्ण आवश्यकता होती हैं। गेने ने अधिगम के निम्नाकिंत आठ प्रकारों परिस्थितियों की व्याख्या की हैं इनको मौलिक रूप से अधिगम सिद्धान्तों से लिया गया हैं।

1. संकेत अधिगम – यह अधिगम परिस्थितियों की श्रृंखला में अधिगम का प्रथम प्रकार हैं इस प्रक्रिया में केवल संकेत मात्र से ही अधिगम कराया जाता हैं संकेत अधिगम पावलव द्वारा प्रस्तुत शास्त्रीय अनुबंधन पर आधारित होता हैं जिसमें प्राणी एक संकेत के प्रति प्रतिक्रियाए करना सीखता हैं।
2. उद्दीपक–अनुक्रिया अधिगम – थार्नडाइक के सम्बन्धवाद तथा स्किनर के विभेदीकृत कार्यात्म पर आधारित अधिगम का रूप है। गेने ने थार्नडाइक के प्रयास एवं मूल अधिगम तथा स्किनर के कार्य अनुबन्धन अधिगम को इस वर्ग के अन्तर्गत रखा इस प्रकार के अधिगम में प्राणी को एक विशिष्ट अधिगम वातावरण में रखा जाता हैं प्राणी के लिए वह वातावरण उद्दीपक का कार्य करता हैं फलतः वह प्रतिक्रियाएं करता हैं सही प्रतिक्रियाओं की पुष्टि करके ही स्थिरीकरण किया जाता हैं इससे प्राणी के अधिगम को स्थायित्व मिलता हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता हैं कि किसी उद्दीपक की उपस्थिति से जब किसी अनुक्रिया का होना सम्भव हो जाए तो वहां हम उद्दीपक अनुक्रिया अधिगम की परिस्थिति कहेगें।
   इस अधिगम के द्वारा छोटे बच्चों को शब्दोच्चारण सिखाया जा सकता हैं इसके अतिरिक्त कई अन्य क्रियाओं जैसे उसके आचरण, भय आदि को सकारात्मक पुनर्बलन देकर हटाया जा सकता हैं।
3. श्रृंखला अधिगम–प्राणी जब संकेत अधिगम एवं उद्दीपक अनुक्रिया सम्बन्ध अधिगम से पूर्ण रूप से परिचित हो जाता हैं तभी श्रृखंला अधिगम की प्रक्रिया प्रारम्भ की जा सकती है स्किनर ने भी इस प्रकार के अधिगम की व्याख्या की है इसमें उद्दीपक अनुक्रिया को लगातार एक क्रम से उपस्थित किया जाता हैं जिससे ''श्रृखंला अधिगम की स्थिति उत्पन्न होती हैं''।
   गेने ने दो प्रकार के श्रृंखला अधिगम की व्याख्या की हैं। पहली हैं शाब्दिक श्रृंखला अधिगम तथा दूसरा अशाब्दिक श्रृंखला अधिगम। शिक्षा के क्षेत्र में बहुत से शिक्षण प्रतिमानों में शाब्दिक अधिगम की ही परिस्थिति उत्पन्न की जाती हैं जैसे अभिक्रमित अनुदेशन में शाब्दिक श्रृंखला की परिस्थिति उत्पन्न कर सीमाओं को तार्किक क्रम में प्रस्तुत किया जाता हैं। अशाब्दिक श्रृंखला अधिगम हेतु चित्रों व अन्य दृश्य साधनों का प्रयोग किया जाता हैं।
4. शाब्दिक साहचर्य अधिगम – अधिगम परिस्थिति का यह प्रकार श्रृंखला अधिगम का ही एक प्रकार हैं जब यह श्रृंखला शारीरिक क्रियाओं यान्त्रिक क्रियाओं अथवा अशाब्दिक रूप में प्रस्तुत होती हैं तो उन्हें अशाब्दिक श्रृंखला अधिगम कहते हैं। यही श्रृंखला जब शाब्दिक अवयवों सम्बन्धी हो जाती है तो हमे उन्हें वाचिक श्रृंखला अधिगम परिस्थिति कहते हैं। गेने के अनुसार– ''लम्बी श्रृंखलाओं को छोटी–छोटी इकाइयों में तोड़कर अधिगम को अधिक सफल व प्रभावी बनाया जा सकता हैं। यहां यह ध्यान देने की बात हैं कि विषयवस्तु से परिचित होने पर तात्कालिक स्मृति का विस्तार बढ़ता हैं तथा पूर्व अधिगम से समायोजित एवं संगठित होती हैं''

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries.

अण्डरवुड (1964) ने इस अधिगम परिस्थिति को मानव अधिगम प्रक्रिया में अधिक महत्त्वपूर्ण माना हैं विशेष रूप से भाषा अधिगम के लिए यह परिस्थिति अत्यन्त ही अनुकूल हैं।

5. विभेद अधिगम – इस अधिगम प्रक्रिया के लिए वाचिक तथा अवाचिक श्रृंखला अधिगम पूर्व ज्ञान का काम करते हैं इस प्रकार के अधिगम में उच्च स्तरीय मानसिक प्रक्रिया सम्मिलित होती हैं। विभेद अधिगम के अन्तर्गत किसी विशेष परिस्थिति पर प्राप्त विभिन्न उत्तेजनाओं को पहचानकर उसमें विभेदकर किसी विशिष्ट उत्तेजना हेतु अनुक्रिया की जाती हैं। इसमें शिक्षक छात्रों में ऐसी क्षमता उत्पन्न करने का प्रयास करता हैं जिससे कि वह दो श्रृंखलाओं का भेद कर सके। इस विभेदीकरण की क्षमता का अर्जन बालक में प्रारम्भिक अवस्था से ही प्रारम्भ हो जाता हैं। इसका महत्त्व बालक के दैनिक जीवन में अधिक हैं। बालक अपने दैनिक जीवन में विभिन्न अंगो में भेद करता हैं यथा – रंगो में, आकार में, बनावट में दूरी में आदि। इस विभेद करने में बालक को मानसिक प्रक्रिया के एक प्रारूप से गुजरना पड़ता हैं यह सरल प्रक्रिया नहीं हैं।

6. सम्प्रत्यय अधिगम – इस अधिगम परिस्थिति के लिए भेदीय अधिगम का ज्ञान पूर्ण आवश्यक है। केन्डलर (1964) ने सर्वप्रथम सम्प्रत्यय अधिगम का उल्लेख किया। राबर्ट गेने ने इसे आगे बढ़ाया। जब छात्र किसी वस्तु, घटना या व्यक्ति के वर्ग या समूह को एक नामकरण के रूप में अधिगम करता हैं तो वह प्रत्यय अधिगम हैं गेने ने सम्प्रत्यय अधिगम को इस प्रकार से परिभाषित किया हैं– ''जो अधिगम व्यक्ति में किसी वस्तु या घटना को एक वर्ग के रूप में अनुक्रिया करना सम्भव बनाते हैं उन्हे हम सम्प्रत्यय अधिगम कहते हैं।

7. सिद्धान्त अधिगम – राबर्ट एम. गेने के अनुसार सिद्धान्त अधिगम अधिगम की सातवी परिस्थिति हैं जिसकी पूर्व आवश्यकता सम्प्रत्यय अधिगम हैं बिना सम्प्रत्यय अधिगम के सिद्धान्त के अधिगम कराना असम्भव प्रतीत होता हैं। दूसरे शब्दों में यह भी कहां जा सकता हैं कि संप्रत्यय अधिगम सिद्धान्त अधिगम हेतु पूर्ण ज्ञान का भी कार्य करता हैं। यदि छात्रों को सम्प्रत्ययों का पूर्ण ज्ञान हैं तब शिक्षक छात्र के सम्मुख दो या दो से अधिक सम्प्रत्ययों के सहयोग से निर्मित सिद्धान्त अधिगम की परिस्थिति उत्पन्न करता हैं। इसमें छात्रों के व्यवहार को इस प्रकार नियन्त्रित किया जाता हैं कि वह सिद्धान्त को वाचिक रूप से (verbal) कह सके तथा उसे व्यवहार में उतार सके।

8. समस्या –समाधान अधिगम – यह गेने द्वारा वार्णित अधिगम की आठवी परिस्थिति हैं। समस्या समाधान द्वारा सीखना, सीखने की श्रेणी में सर्वोच्च स्तर पर समस्या समाधान आता हैं। समस्या समाधान किसी समस्या को हल करने, नई प्रक्रिया को सुलझाने व ज्ञान परिस्थितियों के आधार पर परिणामों का पूर्वानुमान लगाकर कार्य करने से सम्बन्धित हैं। गेने का मानना हैं कि सम्प्रत्यय एवं सिद्धान्त अधिगम की क्षमता की उपलब्धि के बिना समस्या का अधिगम सम्भव नही हैं । गेने के अनुसार– ''समस्या समाधान घटनाओं का ऐसा समूह हैं जिसमें मानव किसी विशिष्ट उद्देश्य की उपलब्धि के लिए अधिनियमों अथवा सिद्धान्तों का उपयोग करता हैं।

## गेने के अनुसार अधिगम के प्रकार

| | | | |
|---|---|---|---|
| 8 | समस्या समाधान अधिगम | → | पूर्व आवश्यकता |
| 7 | सिद्धान्त अधिगम | → | पूर्व आवश्यकता |
| 6 | सम्प्रत्यय अधिगम | → | पूर्व आवश्यकता |
| 5 | विभेद अधिगम | → | पूर्व आवश्यकता |
| 4 | शाब्दिक साहचर्य अधिगम | → | पूर्व आवश्यकता |
| 3 | श्रृंखला अधिगम | → | पूर्व आवश्यकता |
| 2 | उद्दीपन–अनुक्रिया अधिगम | → | पूर्व आवश्यकता |
| 1 | संकेत अधिगम | → | पूर्व आवश्यकता |

राबर्ट गेने द्वारा प्रतिपादित अधिगम में आठ प्रकार (उपर्युक्त परिस्थितियाँ) वस्तुतः अधिगम में विभिन्न सिद्धान्तों की प्रक्रियाओं पर आधारित हैं जिसमें पावलव, स्किनर, थार्नडाइक, गुथरी, कोहलर, कोफ्का व वर्दीमर आदि मनोवैज्ञानिकों के अलग–अलग सिद्धान्तों से उपलब्ध प्रक्रियाओं का सारांश संकलित हैं। इस दृष्टिकोण का विश्लेषण एक सिद्धान्त में सम्भव नहीं हैं वस्तुतः अधिगम की प्रक्रिया विभिन्न जटिल परिस्थितियों का साक्षात्कार (सामना) करती हैं अतः अधिगम की व्याख्या उपर्युक्त वर्णित आठ परिस्थितियों के माध्यम से ही स्पष्ट किया जा सकता हैं जो परस्पर श्रृंखलाबद्ध व एक–दूसरे की पूर्व आवश्यकता हैं। किसी विशिष्ट प्रक्रिया के अधिगम हेतु अधिगमकर्ता को संकेत अधिगम से समस्या समाधान अधिगम तक की प्रक्रिया से गुजरना होता हैं।

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

# Unit –2

# School of Psychology and Learning Theories

1. **अधिगम हैं –**
   अ.) व्यवहार में प्रत्येक परिवर्तन
   ब.) परिपक्वता द्वारा व्यवहार में परिवर्तन
   स.) अनुभवों एवं प्रशिक्षण द्वारा व्यवहार में परिवर्तन
   द.) उपर्युक्त सभी
   (स)

2. **अधिगम के नियमों को प्रतिपादित किया –**
   अ.) थार्नडाइक ब.) सिम्पसन स.) कांट द.) हरबर्ट
   (अ)

3. **अधिगम की सफलता का मुख्य आधार माना जाता हैं – नियमों को प्रतिपादित किया –**
   अ.) प्रशंसा ब.) पुरस्कार
   स.) लक्ष्य प्राप्ति की उत्कृट इच्छा द.) दण्ड व आरोप
   (स)

4. **स्किनर ने प्रयोग किये –**
   अ.) कुत्ता ब.) बन्दर
   स.) बिल्ली द.) चुहा
   (द)

5. **पुनर्बलन के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया –**
   अ.) डोलार्ड और मिलर ब.) पॉवलाव ने
   स.) कोहलर ने द.) इनमें से कोई नहीं
   (अ)

6. **सम्बन्धवाद के सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए। शिक्षा के क्षेत्र में सीखने के इस सिद्धान्त की क्या उपयोगिता हैं ?**
   **Explain critically the theory of connectionism. What is the use of this learning theory in the field of education ?**

**उत्तर** सम्बन्धवाद (संयोजनवाद) के सिद्धान्त का प्रवर्तक थार्नडाइक को माना जाता हैं । थार्नडाइक ने बताया कि सीखना सम्बन्ध स्थापित करना हैं यह संबंध उद्दीपक तथा प्रतिक्रिया के मध्य स्थापित हो जाता है। थार्नडाइक ने कहा कि मानव व्यवहार कुछ उद्दीपको के प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न होते है। यदि किसी विशेष प्रकार के उद्दीपक को बार बार प्रस्तमुत किया जाये तो प्राणी उनके फलस्वरूप विशेष प्रकार की अनुक्रिया करता है।



GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

इस प्रकार प्राणी का व्यवहार उद्दीपक व अनुक्रिया का बन्ध मात्र है। इसके सम्बन्ध इतने अधिक महत्वपूर्ण होते है कि जब कोई विशेष उद्दीपक उपस्थित होता है। तो वही पुरानी प्रतिक्रिया प्रभाव दिखलाती है। थार्नडाइक की धारणा है कि सीखने की प्रतिक्रिया में शारीरिक तथा मानसिक क्रियाओं में आपसी सम्बन्ध होना अतिआवश्यक हैं। यही शारीरिक व मानसिक सम्बन्ध हमारे स्नायु मण्डल में स्थायी सम्बन्ध ग्रहण कर लेते हैं अधिगम की व्याख्या करते हुए थार्नडाइक ने लिखा हैं – ''सीखना स्नायुमण्डल या तन्त्रिका तन्त्र में परिस्थितियों और अनुक्रियाओं के मध्य संयोग, सम्बन्धों का बनना और सशक्त होने की बात हैं। सीखने के सबसे महत्वपूर्ण स्वरूप को थार्नडाइक ने प्रयत्न तथा भूल द्वारा अधिगम बताया। प्राणी किसी उद्देश्य तक पहुंचने के लिए काफी प्रयास करता हैं। इनके अनुसार प्राणी सीखने के प्रथम प्रयास में अधिक त्रुटियां करता हैं, दूसरे प्रयास में उससे कम, तीसरे प्रयास में उससे भी कम तथा इस प्रकार एक ऐसी स्थिति भी आती हैं जब वह त्रुटिया नहीं करता तथा नवीन कार्य एवं व्यवहार को सीख लेता हैं। यह कार्य शारीरिक (कौशल सम्बन्ध) हो सकता हैं या मानसिक हो सकता हैं । इस प्रकार सीखने वाला सफल प्रतिक्रियाओं के चुनाव के द्वारा सीखता हैं

थार्नडाइक ने अपने सिद्धान्त की पुष्टि के लिए अनेक प्रयोग बिल्ली, कुत्तो, चुहों एवं मछलियों पर किये। थार्नडाइक के द्वारा एक भूखी बिल्ली पर किया गया प्रयोग सर्वाधिक मान्यता प्राप्त हैं।

**थार्नडाइक के सीखने के नियम**

थार्नडाइक ने अपने प्रयोगों के आधार पर सीखने के कतिपय नियमों का प्रतिपादन किया इन नियमों को मुख्यतः दो वर्गो में विभाजित किया जा सकता हैं–

I. मुख्य नियम
II. गौण नियम

i. मुख्य नियम
1. तत्परता का नियम
2. अभ्यास का नियम
3. प्रभाव का नियम

1. **तत्परता का नियम**– इस नियम का तात्पर्य हैं कि जब प्राणी किसी कार्य को करने के लिए तैयार होता हैं तो वह प्रक्रिया यदि वह कार्य करता हैं आनन्द देती है, यदि वह कार्य नहीं करता हैं तो तनाव उत्पन्न करती हैं जब वह सीखने को तैयार नहीं होता हैं ओर उसे अधिगम हेतु बाध्य किया जाता हैं तो वह झुंझलाहट अनुभव करता हैं।
2. **अभ्यास का नियम** – यह नियम इस तथ्य पर आधारित हैं कि अभ्यास से व्यक्ति में पूर्णता आती हैं। हिलगार्ड तथा बॉअर ने इस नियम को परिभाषित करते हुए कहा है अभ्यास का नियम यह बताता हैं कि अभ्यास करने से (उद्दीपक तथा अनुक्रिया) का सम्बन्ध मजबूत होता हैं। उपयोग तथा अभ्यास रोक देने से सम्बन्ध कमजोर पड़ जाता हैं या विस्मरण हो जाता हैं।
3. **प्रभाव का नियम** – इस नियम को सन्तोष और असन्तोष का नियम भी कहते हैं। थार्नडाइक के अनुसार जिन कार्यो को करने से व्यक्ति को सन्तोष मिलता है उसे वह बार–बार करता

हैं। जिन कार्यो से असन्तोष मिलता है, उसे वह नहीं करना चाहता । सन्तोषप्रद परिणाम शक्तिवर्धक होते हैं और कष्टदायक परिणाम स्थिति तथा प्रतिक्रिया के बन्धन को निर्बल बना देते हैं।

a. गौण नियम

1. बहु अनुक्रिया का नियम
2. मानसिक स्थिति का नियम
3. आंशिक क्रिया का नियम
4. सादृश्य अनुक्रिया का नियम
5. साहचर्यात्मक स्थानान्तरण का नियम

1) बहु अनुक्रिया का नियम– इस नियम के अनुसार जब व्यक्ति के सामने समस्या आती हैं तो वह उसे सुलझाने के लिए अनेक प्रकार की अनुक्रियाए करता हैं और तब तक करता रहता हैं जब तक वह सही अनुक्रिया की खोज नहीं कर लेता।

2) मानसिक स्थिति का नियम – यदि प्राणी मानसिक रूप से सीखने के लिए तैयार हैं तो नवीन क्रिया को शीघ्र सीख लेता है। यदि प्राणी मानसिक रूप से किसी क्रिया को सीखने के लिए तैयार नहीं हैं तो उस क्रिया को नहीं सीख सकेगा।

3) आंशिक क्रिया का नियम– यह नियम इस बात पर बल देता हैं कि कोई एक प्रतिक्रिया सम्पूर्ण स्थिति के प्रति नहीं होती इस नियम के अनुसार किसी कार्य को अंशतः विभाजित करके किया जाता हैं तो वह शीघ्रता से सीखा जा सकता हैं।

4) सादृश्य अनुक्रिया का नियम – इस नियम का आधार पूर्व अनुभव हैं। प्राणी किसी–किसी नवीन परिस्थिति या समस्या के उपस्थित होने पर उससे मिलती–जुलती अन्य परिस्थिति या समस्या का स्मरण करता हैं जिसे वह पहले भी अनुभव कर चुका हैं वह उसके प्रति वैसी ही प्रतिक्रिया करेगा जैसा कि उसने पहली परिस्थिति एवं समस्या के साथ की थी।

5) साहचर्यात्मक स्थानान्तरण का नियम – इस नियम के अनुसार जो अनुक्रिया किसी एक उत्तेजक के प्रति होती हैं वही अनुक्रिया बाद में उस उत्तेजना से सम्बन्धित तथा किसी अन्य उद्दीपक के प्रति भी होने लगती हैं।

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

**<u>सिद्धान्त की आलोचना</u>**

**<u>इस सिद्धान्त की आलोचना के प्रमुख बिन्दु इस प्रकार हैं:–</u>**

1. थार्नडाइक ने अपने सभी प्रयोग पशुओं पर किये हैं। अतः यह सिद्धान्त सरल व निम्न स्तर के पशुओं के सीखने को अधिक स्पष्ट करता हैं।
2. सिद्धान्त के अनुसार सीखने में प्रगति धीरे–धीरे आती हैं तथा जो सफलता प्राप्त होती हैं वह बहुत बार अकस्मात् ही होती हैं।
3. प्रयत्न तथा भूल द्वारा सीखने में बहुत प्रयत्न करने पड़ते हैं इससे शक्ति व समय नष्ट होता हैं।

4. यह सिद्धान्त अधिगम प्रक्रिया को यन्त्रवत् मानता हैं तथा मानव को भी यन्त्रवत मानता हैं जब कि मानव यन्त्रवत् तरीके से नहीं सीखता हैं।
5. इस सिद्धान्त में अधिगम की क्रिया में विभिन्न परिस्थितियों के साथ सम्बन्ध स्थापित होता हैं अतः अधिगम ही संयोजन है क्यों कि अधिगम की क्रिया का आधार स्नायुमण्डल हैं जहां एक स्नायु का दूसरी स्नायू से सम्बन्ध हो जाता हैं।
6. इस सिद्धान्त में अभ्यास के नियम के आधार पर रटने पर बल दिया हैं।
7. थार्नडाइक ने सीखने की प्रक्रिया में दण्ड व पुरस्कार दोनो पर बल दिया विशेषकर पुरस्कार व सीखने में दण्ड का भी अपना एक विशेष महत्त्व हैं।
8. गैस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिक थार्नडाइक के तीनो नियमों की कड़ी आलोचना करते हैं।

**सिद्धान्त का शिक्षा में महत्व**

1. थार्नडाइक ने उद्दीपक अनुक्रिया में सम्बन्ध स्थापित करके सीखने की प्रक्रिया का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया । उसने बताया कि जो प्राणी जितना जल्दी यह सम्बन्ध स्थापित कर लेता हैं वह उतनी ही जल्दी सीख जाता हैं।
2. थार्नडाइक द्वारा प्रतिपादित अधिगम के नियमों तथा उपनियमों का कक्षा शिक्षण में महत्त्वपूर्ण स्थान हैं नवीन ज्ञान प्रदान करने हेतु छात्रों को तत्पर करना, प्रोत्साहन तथा पुरस्कार द्वारा उन्हें अधिकाधिक सीखने के लिए प्रोत्साहित करना, प्रत्येक छात्र को सीखने पर सन्तोष का अनुभव कराना प्रभाव के नियम पर ही आधारित हैं।
3. यह सिद्धान्त अभ्यास की क्रिया पर आधारित हैं जिससे सीखा गया कार्य स्थायी होता हैं।
4. इस सिद्धान्त के अनुसार बालक को अधिगम लक्ष्य तो मालूम होता हैं लेकिन वहाँ तक पहुँचने का सही तरीका उसे मालूम नहीं होता ।विभिन्न प्रयासों द्वारा वह लक्ष्य प्राप्ति का सही तरीका ज्ञात करता हैं। जिससे उसमें आत्मविश्वास व आत्मनिर्भरता उत्पन्न होता हैं।
5. मनुष्य गामक कुशलताओं का विकास इसी सिद्धान्त के आधार पर प्राप्त करता हैं । यह सिद्धान्त कौशल विकास में बहुत उपयोगी हैं।
6. यह सिद्धान्त प्रयत्न तथा भूल द्वारा सीखने पर बल देता हैं। गणित , विज्ञान, भाषा आदि अनेक विषयों में प्रयत्न तथा भूल द्वारा छात्र सही प्रयत्नों को सीखता हैं।
7. यह सिद्धान्त करके सीखने (learning by doing) पर अधिक बल देता हैं।
8. इस सिद्धान्त के अनुसार छात्र की मनोवृत्ति का अधिगम से गहरा सम्बन्ध हैं। इस दृष्टि से छात्रों को कुछ भी सीखने से पूर्व कार्य के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करना नितान्त आवश्यक हैं।
9. थार्नडाइक के सिद्धान्त के विश्लेषण से स्पष्ट हैं कि उन्होने सीखने के लिए पुनबर्लन को आवश्यक माना हैं क्यों कि सीखी गई अनुक्रिया को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने के लिए पुनर्बलन आवश्यक होता हैं।

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

7. **सीखने के सक्रिय अनुकूलित अनुक्रिया सिद्धान्त का वर्णन कीजिए। पॉवलव के संस्थापित अनुकूलित–अनुक्रिया सिद्धान्त से यह किस प्रकार भिन्न हैं ? शिक्षा में इसके योगदान का विवेचन कीजिए ।**

**Describe the operant conditioning theory of learning. How is it different from Pavlov's classical conditioning? Discuss the application in education.**

**उत्तर** इस सिद्धान्त का प्रतिपादन अमेरिका के हारवर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बी.एफ स्किनर ने किया। इस सिद्धान्त का प्रमुख आधार थॉर्नडाइक द्वारा प्रतिपादित प्रभाव का नियम था । इस नियम के अनुसार यदि किसी अनुक्रिया या व्यवहार के बाद सन्तोष या आनन्द की अनुभूति होती हैं तो प्राणी उस व्यवहार को दोहराना चाहता हैं इसके विपरीत यदि किसी अनुक्रिया के पश्चात् असन्तोष या दुःख का अनुभव होता हैं तो प्राणी उस व्यवहार को पुनः दोहराना नहीं चाहता । इस प्रकार ऐसे व्यवहार में उत्तेजन एंव अनुक्रिया का बन्धन (S-R bond) कमजोर हो जाता हैं यही नियम स्किनर के क्रिया प्रसूत व अनुबन्धन का आधार हैं।

स्किनर के सिद्धान्त के क्रियाप्रसूत (operant) अथवा साधक (instrumental) अनुबन्धन कहा हैं। क्रियाप्रसूत का तात्पर्य उस कार्य या व्यवहार से हैं जिसे प्राणी सीखते समय करता हैं अर्थात सीखने के लिए प्राणी को वातावरण के प्रति क्रियाशील (operate) होना पड़ता हैं साधक का अर्थ है कि प्राणी को अपनी परिस्थितियों को नियन्त्रित करना होता हैं इस प्रकार साधक अनुबन्धन (Instrumental conditioning) के अन्तर्गत अनुकूलित अनुबन्धन की तुलना में अधिक क्रिया अपेक्षित हैं।

स्किनर द्वारा किये गये प्रयोग – स्किनर ने चुहे तथा कबूतरों पर अनेक प्रयोग किये। स्किनर ने एक ध्वनिविहीन बॉक्स बनाया । जिसमें एक लीवर के दबाने से भोजन के कुछ दाने आ जाते थे। एक भूखे चूहे को स्किनर ने बॉक्स में रख दिया। चूहे ने इधर–उधर घूमकर कुछ ढूंढना शुरू किया। इसी उछलकूद में उसके द्वारा लीवर दब गया। भोजन के दाने प्याले में आ गये और चूहे ने भोजन को खा लिया । चूहा फिर इधर–उधर घूमते–घूमते लीवर को दबा देता हैं और उसे भोजन की प्राप्ति हो जाती है। धीरे–धीरे वह लीवर को दबाना सीख जाता हैं, क्यों कि लीवर के दबने से उसे भोजन मिलता हैं।

चुहे के व्यवहार का लेखा–जोखा बनाने पर पाया गया कि प्रत्येक अगली बार लीवर को दबाने में चुहे ने पहले की तुलना में कम समय लगाया। यहां तक कि कुछ समय के बाद तो वह बार–बार लीवर को बिना विलम्ब के दबाना सीख गया क्यों कि लीवर के दबने से उसे भोजन मिलता हैं। जिसका प्रमुख कारण हैं अनुक्रिया तथा पुनबर्लन में अनुबन्धन अनुबन्धन के लिए तुरन्त पुनबर्लन देना ही प्रभावशाली होता हैं।

स्किनर ने एक अन्य प्रयोग में भूखे कबूतर को बॉक्स में बन्द कर दिया तथा प्रकाश किया गया । प्रकाश होते ही कबूतर चोंच मारता हैं और उसे भोजन उपलब्ध हो जाता था। इस प्रकार की क्रिया को बार–बार करने से कबूतर ने सिर घुमाकर चोंच मारना प्रारम्भ कर दिया। इस तरह से किया गया प्रसूत अनुबन्धन के सिद्धान्त का विकास किया गया। सक्रिय अनुबन्धन अनुक्रिया में उस उद्दीपन को महत्त्वपूर्ण समझा जाता हैं जिसके लिये तत्काल अनुक्रिया की जा सके। जो अनुक्रिया की गई

पुनर्बलन के लिए दिशा प्रदान करती हैं जिससे इस प्रकार की अनुक्रियाओं की सम्भावना बढ़ती हैं जैसे–गणित के शिक्षण में आरम्भ की परिस्थितियों में उद्दीपन के लिए त्रिभुज अनुक्रिया को शिक्षक स्वीकार कर लेता हैं ओर बाद की परिस्थिति में समद्विबाहु त्रिभुज अनुक्रिया को स्वीकार करता हैं।

**क्रियाप्रसूत अनुबन्धन एवं शिक्षा**

इस सिद्धान्त का अनुप्रयोग बालकों की शिक्षा के लिए भी व्यवस्थित रूप से किया जा सकता हैं । एक अध्यापक कक्षागत परिस्थितियों में निम्न प्रकार से इस सिद्धान्त को प्रयुक्त कर सकता हैं –

1. अध्यापक छात्रों द्वारा की जाने वाली अपेक्षित प्रतिक्रियाओं को यदि प्रशंसा, पुरस्कार व अपनी सहमति के द्वारा पुनर्बलित कर दे तो छात्र ऐसी प्रतिक्रियाओं को बार–बार दोहराते हैं। अतः उनके व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन होता हैं।
2. छात्रों को उनके अधिगम के लिए तुरन्त प्रतिबल या पुरस्कृत करने से सीखने की क्रिया में आसानी होती हैं।
3. अध्यापक छात्रों के अवांछनीय आचरण एवं व्यवहारों को नकारात्मक पुनर्बलन के द्वारा दूर कर सकता हैं।
4. छात्रों के मन से व्यर्थ का डर तथा चिन्ताओं का निराकरण करने में भी इस सिद्धान्त का प्रयोग कक्षा–कक्ष में अध्यापक कर सकता हैं।
5. इस सिद्धान्त के माध्यम से निदानात्मक शिक्षण भी सम्भव हैं।
6. आधुनिक युग में शिक्षण यन्त्र (teaching machine) कम्प्यूटर द्वारा सीखना तथा अभिक्रमित अनुदेशन आदि विधियों में पुनर्बलन के इसी सिद्धान्त द्वारा अधिगम होता हैं।
7. कौशल विकास में कौशल के प्रत्येक भागो को व्यवस्थित रूप से पुनर्बलन द्वारा आसानी से तथा शीघ्र सिखाया जा सकता हैं।
8. बालकों को उचित व्यवहार प्रशिक्षण इसी सिद्धान्त के आधार पर पूर्व नियोजित पुनर्बलन द्वारा दिया जाता हैं।
9. यह विधि मानसिक दृष्टि से कमजोर बालकों के शिक्षण के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई हैं।
10. सक्रिय अनुबन्धन में पुरस्कार दण्ड परिणाम का ज्ञान आदि बालकों को पुनर्बलन देकर अधिगम को बल प्रदान करते हैं।
11. पाठ्यक्रम निर्धारण में पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम को छोटे–छोटे भागों में बाँटकर क्रमबद्ध कर प्रस्तुत करने में पाठ्यवस्तु के उद्देश्य निश्चित कर तथा उनकी प्राप्ति के लिए उचित प्रदर्शन में यह विधि अत्यन्त सार्थक सिद्ध हुई हैं।

पावलव के अनुकूलित अनुक्रिया तथा स्किनर के कार्यात्मक अनुबन्धन में अन्तर

अनुबन्धन के मुख्य दो प्रारूप हैं– शास्त्रीय अनुबन्धन (classical conditioning) तथा कार्यात्मक अनुबन्धन (instrumental conditioning) इन दोनो तरह के अनुबन्धन में मुख्य समानता यह हैं कि इन दोनो के अनुबन्धन द्वारा सीखने में पुनर्बलन (reinforcement) प्राणी में अन्तर्नोद (drive) तथा उद्दीपक अनुक्रिया (stimulus-response) का होना अनिवार्य हैं। इन समानताओं के होते हुए भी इन

दोनो सिद्धान्तों में विभिन्नता भी दृष्टिगोचर होती हैं। पावलव के अनुकूलित अनुबन्धन तथा साधनात्मक अनुबन्धन में दो तरह के प्रमुख अन्तर हैं।

(अ) कार्यविधि सम्बन्धी अन्तर (Procedural difference)

(ब) सैद्धान्तिक अन्तर ( Theoretical difference )

(अ) **कार्यविधि सम्बन्धी अन्तर** – पावलव के शास्त्रीय अनुबन्धन में UCS (अर्थात भोजन) प्रयोज्य (subject) को पहले दिया जाता हैं और अनुक्रिया (response) बाद में होती हैं। दूसरे शब्दों में पावलव ने कुत्ते के सामने भोजन अर्थात (ucs) पहले दिया जाता था वह लार की अनुक्रिया (salivation response) बाद में करता था । इसका अर्थ यह हुआ UCS का दिया जाना अनुक्रिया (response) पर आधारित नहीं होता। कार्यात्मक अनुबन्धन में ऐसा नहीं हैं। स्कीनर में कार्यात्मक अनुबन्धन में चुहे को भोजन तभी दिया जाता हैं जब वह सही अनुक्रिया करता हैं अर्थात् लीवर को दबाता हैं। कार्यात्मक अनुबन्धन में UCS (Unconditioned stimulus) स्वाभाविक उद्दीपक भोजन का दिया जाना सही अनुक्रिया के होने पर आधारित हैं।

(ब) पावलव के सिद्धान्त में भोजन देने की प्रक्रिया पर प्रयोगकर्ता का पूर्ण नियन्त्रण रहता हैं। स्किनर के कार्यात्मक अनुबन्धन में प्रयोगकर्ता का इस तरह का कोई नियन्त्रण नहीं रहता।

(स) पावलव के अनुकूलित अनुबन्धन में cs(Conditioned stimulus) एवं UCS (Unconditioned stimulus) के बीच का समय महत्त्वपूर्ण होता हैं यदि पावलव के प्रयोग में घंटी बजने के दो घंटे बाद यदि भोजन दिया जाये तो सम्भव हैं कि कुत्ता घंटी की आवाज पर लार स्राव करने की अनुक्रिया करे ही नहीं । परन्तु स्किनर के कार्यात्मक अनुबन्धन में जीव द्वारा की गयी अनुक्रिया (response) तथा उसके परिणाम के बीच का समय महत्त्वपूर्ण होता हैं। स्किनर बाक्स में चूहे द्वारा लीवर दबाने की गयी अनुक्रिया तथा उसका परिणाम अर्थात भोजन मिलने का समय जैसे–जैस अधिक होता जाता है तो सीखी गयी अनुक्रिया की शक्ति क्षीण हो जाती हैं।

(द) पावलव के सिद्धान्त में UCS भोजन (Unconditioned stimulus) स्पष्ट होता हैं कुत्ता भोजन के प्रस्तुतीकरण पर लार स्राव करने की अनुक्रिया करता हैं इस प्रार उद्दीपक (stimulus) द्वारा अनुक्रिया (response) उत्पन्न होती हैं अर्थात इस प्रक्रिया को हम S-R ( stimulus -response) सूत्र के माध्यम से स्पष्ट कर सकते हैं । स्किनर बॉक्स में लीवर दबाने की अनुक्रिया पहले होती हैं और भोजन बाद में प्राप्त होता हैं यह स्पष्ट है कि यह क्रम S-R की विपरीत R-S जाता है।

(य) शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त में उत्तेजक – प्रतिक्रिया सम्बन्ध समीपता के आधार पर होता है जब कि कार्यात्मक अनुबन्धन में यह सम्बन्ध परिणाम के आधार पर होता है शास्त्रीय

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries.

अनुबन्धन में पुनबर्लन प्रतिक्रिया से पहले दिया जाता हैं जबकि कार्यात्मक अनुबन्धन में पुनर्बलन प्रतिक्रिया के बाद में दिया जाता हैं।

(र) पावलव के शास्त्रीय अनुबन्धन में UCS (Unconditioned stimulus) एक साथ दो कार्य करता है यहाँ भोजन अनुक्रिया भी उत्पन्न करता है तथा उसे पुनर्बलित भी करता हैं स्किनर के सिद्धान्त में अनुक्रिया करने के लिए ही प्रेरित कर रहा हैं उसे उत्पन्न नहीं कर रहा हैं।

(ब) सैद्धान्तिक आधार

1. पावलव के अनुबन्धन द्वारा प्रतिवादी अनुक्रिया (respondent response) का अनुबन्धन होता हैं जब कि कार्यात्मक अनुबन्धन द्वारा किया प्रसूत अनुक्रिया (operant response) का अनुबन्धन होता हैं। कुत्ते के द्वारा लार स्राव करना प्रतिवादी अनुक्रिया का उदाहरण हैं तथा लीवर दबाने की अनुक्रिया करना एक क्रियाप्रसूत अनुक्रिया (operant response) का उदाहरण हैं।
2. पावलव के अनुबन्धन द्वारा ग्रन्थीय (glandulas) एवं आन्तरांग (visceral) अनुक्रियाओं जैसे लार स्राव की क्रिया, हद्रय की गतिकी, क्रियाए आदि का अनुबन्धन अधिक होता हैं इस तरह की अनुक्रियाओं का नियन्त्रण स्वायत्त तन्त्रिका तन्त्र द्वारा होता हैं। कार्यात्मक अनुबन्धन द्वारा पेशीय (mascular) एवं अनुकूली (adaptive ) अनुक्रियाएं जैसे लीवर का बटन दबना, चोंच मारना, दौड़ना आदि का अनुबन्धन होता हैं। ऐसी क्रियाएं कायिक तन्त्रिका तन्त्र (somatic nervous system) के नियन्त्रण में होती हैं।
3. पावलव के अनुकूलित अनुक्रिया के सिद्धान्त में कमजोर उद्दीपक को भी पुनबर्लन के रूप में प्रयोग किया जा सकता हैं क्यों कि इस अनुबन्धन का सम्बन्ध ग्रन्थीय अनुक्रियाओं (glandular response) से होता हैं परन्तु कार्यात्मक अनुबन्धन कमजोर उद्दीपक (weak stimulus) के पुनर्बलन के रूप में प्रयुक्त नहीं किया जा सकता क्यों इसका सम्बन्ध पेशीय अनुक्रिया से होता हैं।

अतः निष्कर्ष यह हैं कि पावलव का शास्त्रीय अनुबन्धन तथा स्किनर का कार्यात्मक अनुबन्धन कार्य–विधि (procedure) के दृष्टिकोण से एक–दूसरे से काफी अलग हैं परन्तु सैद्धान्तिक रूप से (Theoretically) बहुत भिन्न नहीं है।

8. **प्याजे के विकास के सिद्धान्त के मुख्य प्रत्ययों एवं अवस्थाओं को लिखों**
**Write concepts and stages of piaget theory of development.**

**उत्तर** प्याजे के विकास के सिद्धान्त के मुख्य प्रत्यय

स्विस मनोवैज्ञानिक पियाजे (Jean piaget) ने मानव के मानसिक विकास की व्याख्या संज्ञानात्मक (cognitive) विकास के रूप में की हैं। संज्ञानात्मक विकास को उन्होने सम्प्रत्यय निर्माण (concept formation) के रूप में अभिव्यक्त किया हैं। उन्होनें संज्ञानात्मक विकास को निम्नलिखित चार कालों में विभाजित किया हैं :–

संवेदी पेशीय अवस्था – पियाजे के अनुसार जन्म से दो वर्ष तक की आयु के बालक अपनी इन्द्रियों द्वारा प्राथमिक अनुभव प्राप्त करते हैं पियाजे ने इस काल को संवेदी पेशीय अवस्था कहा हैं। पियाजे के अनुसार जन्म से 2 वर्ष तक बालक का संज्ञानात्मक विकास निम्नलिखित छह उप–अवस्थाओं (sub-stages) में होता हैं :–

i. सहज क्रियाओं की अवस्था – पियाजे के अनुसार जन्म से 30 दिन तक की अवस्था होती है। इस अवस्था में बालक केवल सहज क्रियाएं (Reflex activities) करता हैं। इन क्रियाओं में किसी भी वस्तु को मुँह में लेकर चुसने की क्रिया सबसे अधिक प्रबल होती है।

ii. प्रमुख वृत्तीय अनुक्रियाओं की अवस्था – यह अवस्था 1 माह से 4 माह आयु तक की होती हैं 1 माह से 4 माह के बच्चों की सरल क्रियाएं कुछ सीमा तक उनकी अनुभूतियों द्वारा परिवर्तित होती हैं दोहराई जाती हैं और एक–दूसरे के साथ समन्वित होती हैं। इन अनुक्रियाओं को प्रमुख इसलिए कहा जाता हैं क्यों कि ये बच्चों के शरीर की प्रमुख अनुक्रियाएं होती हैं और इन्हें वृत्तीय इसलिए कहा जाता है क्यों कि बच्चे बार–बार दोहराते हैं । इस अवस्था के बच्चें अपने अनुभवों को बिना भय के अभिव्यक्त करते हैं।

iii. गौण वृत्तीय अनुक्रियाओं की अवस्था – यह अवस्था 4 माह से 6 माह की अवस्था होती हैं । इस अवस्था में बच्चें वस्तुओं को स्पर्श करने और उन्हे इधर–उधर करने की अनुक्रियाए करते हैं और साथ ही साथ कुछ ऐसी अनुक्रियाएं करते हैं जिनसे उन्हें सुख मिलता हैं।

iv. गौण स्कीम के समन्वय की अवस्था – यह अवस्था 8 माह से 12 माह तक की अवस्था हैं इस अवस्था में बच्चे उद्देश्य और उसको प्राप्त करने के साधन में अन्तर करने लगते हैं और साथ ही अपने से बड़ो की क्रियाओं का अनुकरण करने लगते हैं। इस अवस्था में बच्चे जो स्कीमा अर्थात् व्यवहारों के संगठित पैटर्न देखते हैं उनका सामान्यीकरण करने लगते हैं।

v. तृतीय वृत्तीय अनुक्रियाओं की अवस्था – यह अवस्था 12 से 18 माह की अवस्था है । इस अवस्था में बच्चे वस्तुओं के गुणो को प्रयत्न एवं भूल द्वारा सीखकर ग्रहण करते हैं।

vi. मानसिक संयोग द्वारा –नए साधनों की खोज की अवस्था – यह अवस्था 18 से 24 माह की अवस्था हैं इस अवस्था में बच्चे देखी गई वस्तु की अनुपस्थिति में भी उसके अस्तित्व को समझने लगते हैं।

(2) प्राकसंक्रियाात्मक अवस्था – पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास की इस अवस्था को 2 साल से 7 साल तक की को प्राक्संक्रियात्मक अवस्था कहां हैं। इस अवस्था को पियाजे ने दो उप–अवस्थाओं में विभाजित किया हैं–

i. प्राकसम्प्रत्यात्मक अवधि – यह अवधि 2 वर्ष की आयु से 4 वर्ष तक की आयु तक होती हैं। इस अवस्था में बच्चे अपने इर्द–गिर्द की वस्तुओं और प्राणियों में और वस्तुओं और शब्दों में सम्बन्ध स्थापित करने लगते हैं यह सब प्रायः अनुकरण एवं खेल द्वारा सीखते हैं। पियाजे के अनुसार 4 वर्ष तक की अवस्था के बच्चे सभी निर्जीव वस्तुओं को सजीव प्राणियों के रूप में समझते हैं । इसे उन्होने जीववाद (animism) की संज्ञा दी हैं।

ii. अन्तर्दर्शी अवस्था – यह अवस्था 4 वर्ष की आयु से 7 वर्ष की आयु तक चलती हैं। इस अवस्था में बालक भाषा सीखने लगते हैं । तर्क एवं चिन्तन करने लगते हैं परन्तु उनके तर्क व चिन्तन में क्रमबद्धता नहीं होती जैसे – वे 2 x 2 = 4 तो समझते है परन्तु $\frac{4}{2} = 2$ कैसे हुआ यह नहीं समझते है।

(3) मूर्त संक्रिया की अवस्था – पियाजे ने 7 वर्ष से 11 वर्ष तक की अवस्था को मूर्त संक्रिया अवस्था कहा हैं । इस अवस्था के बच्चें अधिक व्यावहारिक एंव यथार्थवादी होते हैं। इस अवस्था में बच्चों में तर्क एवं समस्या–समाधान की क्षमता का विकास होने लगता हैं वे मूर्त समस्याओं के समाधान तो ढूंढते हैं लेकिन अमूर्त समस्याओं के विषय में नहीं सोच पाते।

(4) औपचारिक संक्रिय अवस्था– यह अवस्था 12 वर्ष की आयु से वयस्क होने तक की अवस्था हैं 12 वर्ष के होते–होते बालकों का मस्तिष्क परिपक्व होने लगता हैं उनके चिन्तन में क्रमबद्धता आनी शुरू हो जाती हैं जैसे–जैसे उनकी आयु बढ़ती जाती हैं और उनके अनुभव बढ़ते जाते है।

पियाजे के विकास के सिद्धान्त की अवस्थाएं–

पियाजे के अनुसार बालक में यह नैतिक विकास दो चरणों में होता हैं –

(1) नैतिकता बंधनयुक्त चरण
(2) नैतिकता का स्वायत्त चरण

(1) नैतिकता बंधनयुक्त चरण – 5 से 10 वर्ष की आयु तक इस अवस्था में बालक माता–पिता तथा अध्यापक द्वारा बताई गयी बातों का अक्षरशः पालन करता हैं वह माता–पिता तथा अध्यापक द्वारा बताई गयी बातो का पालन न करने पर दण्डित किया जाएगा यह बात जानता हैं वह बड़ो (माता–पिता व अध्यापक) द्वारा बतायी गई बातों को नियम समझता हैं और नियमों का सख्ती से पालन करता हैं इस अवस्था में बालक यह नहीं भेद कर पाता कि नियम जानबुझकर तोड़े गये हैं अथवा अनजाने में गलती हुयी हैं उसकी दृष्टि में दोनों परिस्थितियों में समान दण्ड देना चाहिए तथा बड़ी गलती की सजा बड़ा दण्ड होना चाहिए।

(2) नैतिकता का स्वायत्त चरण –10 से 12 वर्ष की आयु तक की अवस्था में बालक यह समझने लगता हैं कि नियम व्यक्तियों द्वारा निर्मित होते हैं अतः परिवर्तनशील होते हैं। वह खेल में भी खेल के नियमों में अपनी आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर लेता हैं। इस अवस्था में बालक समझता है कि जानबुझकर की गई छोटी गलती की सजा अनजाने में हुई बड़ी गलती की तुलना में अधिक होगी।

## पियाजे के सिद्धान्त की अवस्थाओं को प्रभावित करने वाले कारक

1. वंशानुक्रम – बालक का विकास वंशानुक्रम से उपलब्ध गुण एवं क्षमताओं पर निर्भर करता हैं। गर्भधारण करने के साथ ही बालक में पैतृक कोषों का आरम्भ हो जाता हैं तथा यही से बालक की बुद्धि एवं विकास की सीमाएँ सुनिश्चित हो जाती हैं। बालक के कद, आकृति, बुद्धि, चरित्र आदि को भी वंशानुक्रम सम्बन्धी विशेषताएं प्रभावित करती हैं।
2. वातावरण – वातावरण भी बालक के विकास को प्रभावित करने वाला तत्व हैं। वातावरण के फलस्वरूप व्यक्ति में अनेक विशेषताओं का विकास होता हैं। बालक के जीवन दर्शन एवं शैली का स्वरूप, स्कूल, समाज, पड़ौस तथा परिवार के प्रभाव के परिणामस्वरूप ही स्पष्ट होता हैं।
3. बुद्धि – कुशाग्रबुद्धि वाले बालकों का शारीरिक एवं मानसिक विकास मन्द बुद्धि वालो की अपेक्षा अधिक तेज गति से होता हैं। कुशाग्र बुद्धि बालक शीघ्र बोलने एवं चलने लगते हैं।
4. लिंग – बालकों के शारीरिक एवं मानसिक विकास में लिगंभेद का भी प्रभाव पड़ता हैं। जन्म के समय बालकों का आकार बड़ा होता है, किन्तु बाद में बालिकाओं में शारीरिक विकास की गति तीव्र होती हैं इसी प्रकार बालिकाओं में मानसिक एवं यौन परिपक्वता बालकों में पहले आ जाती हैं।
5. अन्तः स्रावी ग्रन्थियां – बालकों के शरीर में अनेक अन्तःस्रावी ग्रन्थियां होती हैं । जिसमें से विशेष प्रकार के रस का स्राव होता हैं। यही रस बालक के विकास को प्रभावित करता हैं । उदाहरण के लिए गल–ग्रन्थि (thyroid gland) से स्रावित रस थाइरॉक्सीन बालक के कद को प्रभावित करता हैं। इसके स्रावित न होने पर बालक बौना रह जाता हैं।

Get Instant Access to Your Study Related Queries

## Unit –3

# Psychological Determinants of Teaching Learning

1. **मोटीवेशन (motivation) शब्द की उत्पत्ति किस भाषा से हुई हैं ?**
   अ.) फ्रेचं ब.) जर्मनी
   स.) लैटिन द.) इटालियन
   (स)

2. **अभिप्रेरणा का प्रमुख सिद्धान्त नहीं हैं –**
   अ.) मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त ब.) मूल प्रवृत्ति का सिद्धान्त
   स.) उद्दीपन अनुक्रिया का सिद्धान्त द.) भाषायी सिद्धान्त
   (द )

3. **अभिवृत्ति को एक अर्जित एवं स्थायी प्रवृत्ति बताने वाले मनोवैज्ञानिक हैं –**
   अ.) कैट्ज ब.) थर्स्टन
   स.) न्यूकाम्ब द.) बर्कोविट्ज
   (स)

4. **सृजनात्मकता की विशेषता हैं –**
   अ.) सृजनात्मकता मौलिक एवं नवीन हो
   ब.) सृजनात्मकता कार्य उपयोगी हो।
   स.) सृजनात्मक कार्य को समान रूप से मान्यता मिलनी चाहिए
   द.) उपर्युक्त सभी
   (द)

5. **व्यक्तित्व शब्द की उत्पत्ति हुई हैं।**
   अ.) लैटिन भाषा के शब्द परसोना से
   ब.) यूनानी भाषा के शब्द परसोना से
   स.) आंग्ल भाषा के शब्द परसोना से
   द.) उपर्युक्त सभी (अ)

6. **सृजनात्मकता की प्रकृति एवं विधि का वर्णन कीजिए ?**
   **Explain the nature and process of creativity ?**

**उत्तर** प्रागैतिहासिक काल से आधुनिक काल तक की सभ्यता व संस्कृति मानव सजृनशीलता की यात्रा हैं। बैलगाड़ी से अन्तरिक्ष यात्रा की कहानी मनुष्य की सजृनात्मकता सम्बन्धी योग्यतओं को दर्शाती हैं। मनोविज्ञान में सजृनात्मकता से तात्पर्य मनुष्य के उस गुण, योग्यता अथवा शक्ति से होता हैं जिसके



GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

द्वारा वह कुछ नया सृजन करता हैं। जैसे– कवि द्वारा नई कविता की रचना, लेखक द्वारा नए मौलिक विचारों से युक्त लेख की रचना एवं वैज्ञानिकों द्वारा नए–नए तथ्यों की खोज ।

सृजनात्मकता शब्द अंग्रेजी भाषा के क्रियेटीविटी (creativity) का हिन्दी रूपान्तर हैं क्रियेट एक क्रिया है जिसका अर्थ हैं बनना। जब हम क्रियेटिव शब्द का प्रयोग करते हैं तो इसका अर्थ योग्यता शक्ति से लगाया जाता हैं। क्रियेटिव शब्द से तात्पर्य है निर्माण करने की योग्यता।

**सजृनात्मकता की परिभाषा**

आसुबेल ने सजृनशीलता को बौद्धिक योग्यताओं, व्यक्तिव सम्बन्धी चरों एवं समस्या समाधान विशेषकों का सामान्यीकृत पुँज कहा हैं।

कोल एवं ब्रुश ने सृजनात्मकता को मानसिक प्रक्रिया और नवीन उत्पाद की क्रिया दोनो के संयुक्त रूप में परिभाषित किया हैं –

'' सजृनात्मकता एक मौलिक उत्पाद के रूप में मानव मन की ग्रहण करने, अभिव्यक्त करने और गुणांकन करने की योग्यता एव क्रिया हैं।''

**मनोवैज्ञानिक गिलफोर्ड ने सृजनात्मकता की प्रकृति को निम्नलिखित रूप में बताया हैं –**

1. तात्कालिक स्थिति से आगे जाने की योग्यता – सृजनात्मकता का पहला तत्व हैं– आगे की सोचना। जिन मनुष्यों में 'जो हैं' के आगे' जो हो सकता हैं' सोचने की जितनी अधिक योग्यता होती हैं उसमें उतनी अधिक सृजनात्मकता होती हैं।
2. समस्या की पुनर्व्याख्या – गिलफोर्ड के अनुसार जिन मनुष्यो में किसी समस्या की नए ढंग से व्याख्या करने की जितनी अधिक योग्यता होती हैं उसमें उतनी ही अधिक सृजनात्मकता होती हैं यह सृजनात्मकता का मुख्य तत्व होता हैं।
3. सामंजस्य – गिलफोर्ड के अनुसार जिन मनुष्यों में अपनी नई परिस्थितियों में समायोजन करने की जितनी अधिक योग्यता होती हैं उनमें उतनी ही अधिक सृजनात्मकता होती हैं।
4. अन्यों के विचारों में परिवर्तन – गिलफोर्ड के अनुसार सृजनशील व्यक्तियों में दूसरे के विचारों की आलोचना करने एवं उनमें संशोधन करने की योग्यता भी होती हैं, यह सृजनात्मकता का एक तत्व अथवा घटक होता हैं।

**मनोवैज्ञानिकों ने सृजनात्मकता के कुछ अन्य तत्वों की भी खोज की हैं जो निम्न हैं:–**

(1) संवेदनशीलता– जिन व्यक्तियों में सृजनात्मकता होती हैं वे संवेदनशील होते हैं, विशेषकर परिवर्तन के प्रति ।

(2) नवीनता – नवीनता सृजनात्मकता का महत्वपूर्ण तत्व हैं जब तक व्यक्ति में नवीनता के प्रति आकर्षण नहीं होगा, वह नवीन सृजन नहीं कर सकता।

(3) मौलिकता – मौलिकता का सम्बन्ध नवीनता से होता हैं किसी नवीन विचार को प्रस्तुत करने अथवा किसी समस्या को नए ढंग से सुलझाने की शक्ति को मौलिकता कहते हैं।

(4) प्रवाह – किसी समस्या के हल अथवा किसी वस्तु के निर्माण के लिए निरन्तर प्रयत्नशील

रहने को प्रवाह कहते हैं। सृजनात्मक व्यक्तियों के चिन्तन में प्रवाह होता हैं।

(5) नमनीयता – किसी वस्तु को अनेक रूप में प्रस्तुत करने अथवा किसी समस्या के अनेक हल प्रस्तुत करने की क्षमता को नमनीयता कहते हैं । टॉरेन्स के अनुसार जिन व्यक्तियों में यह क्षमता होती हैं उनमें सृजनात्मकता होती हैं।

(6) विस्तारता – किसी विचार को अपने अनुभवों के आधार पर विस्तृत व्याख्या करने को विस्तारता कहते हैं।

(7) स्वतन्त्र निर्णय– सृजनशील व्यक्तियों में आत्मविश्वास होता हैं, वे आत्मनिर्भर होते हैं और वे स्वतन्त्र रूप से निर्णय लेते हैं।

(8) पुर्नपरिभाषीकरण – पुर्नपरिभाषीकरण का अर्थ है किसी वस्त, क्रिया अथवा विचार को पुर्व प्रचलित रूप में प्रस्तुत न कर उसे नए रूप में प्रस्तुत करना। सृजनात्मकता में यह तत्व भी होता हैं।

(9) सृजनात्मक उत्पादन – सृजनात्मकता का मूल तत्व सृजनात्मक चिन्तन होता हैं। इसी से व्यक्ति नए विचार, नई रचना, और नए उत्पादन करने में सफल होते हैं।

## सृजनात्मकता की विधि

बालको में भिन्न–भिन्न प्रकार की सृजनात्मकता को दृश्य रूप में लाने में प्रयुक्त माध्यम को सृजनात्मकता की विधि कहा जाता हैं। बालकों की सृजनशीलता को बढ़ाने के लिए निम्नलिखित करने चाहिए :–

1. सृजनात्मकता का सम्बन्ध अहं से होता है अतः परिवार और विद्यालय दोनो को बालको को अहं की तुष्टि के अवसर देने चाहिए ।
2. बालकों के चारो ओर का वातावरण उन्हें कुछ नया करने के लिए प्रेरित करने वाला होना चाहिए।
3. बालको को ऐसे केन्द्रों का निरीक्षण कराया जाना चाहिए । जहां सृजनात्मकता के कार्य हो रहे हो।
4. बालकों में आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता जैसे गुणों का विकास करना चाहिए।
5. बालकों को सृजनात्मकता सम्बन्धी किसी भी प्रकार की अनुक्रिया करने के स्वतन्त्र अवसर देने चाहिए।
6. बालकों के मौलिक विचारों एवं कार्यो के लिए उन्हें प्रोत्साहन देना चाहिए।
7. बालकों को तनाव, दुश्चिन्ता एवं भग्नाशा आदि मानसिक विकारों से बचाना चाहिए, उसी स्थिति में वे आत्मविश्वास के साथ सृजनशील कार्य कर सकते हैं।
8. विद्यालयों में पाठ्यचारी क्रियाओं के साथ–साथ साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सहपाठ्यचारी क्रियाओं का आयोजन करना चाहिए और छात्रों को अपनी सृजनात्मकता की अभिव्यक्ति के स्वतन्त्र अवसर देने चाहिए।
9. वर्तमान में बालकों की सृजनात्मकता के विकास की कुछ नई तकनीके विकसित हुयी हैं जैसे– खेल तकनीकी एवं ब्रेन स्टोरमिंग। परिवार में अभिभावकों और विद्यालय में शिक्षकों को इन तकनीको का प्रयोग करना चाहिए।

10. यह भी आवश्यक है कि अभिभावक एवं शिक्षक बालकों को अपनी सृजनात्मकता के विकास के लिए आवश्यक सामग्री सुलभ कराएं।

7. **बुद्धि का अर्थ स्पष्ट करते हुए बुद्धि के प्रकार एवं बुद्धि परीक्षणों की उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए ? Explain the meaning of intelligence. Kinds of intelligence and explain the uses of intelligence tests.**

**उत्तर** बुद्धि क्या हैं ? इन प्रश्नों पर विद्वानों में मतभेद रहा हैं। प्राचीन समय में रटने को बुद्धि का परिचायक मानते थे। जो बालक गुरूजी द्वारा प्रदत्त मौखिक ज्ञान को शीघ्र कंठस्थ कर लेता था और उसे अधिक समय तक मस्तिष्क मे स्थिर रखता था उसे बुद्धिमान की संज्ञा से सुशोभित किया जाता था किन्तु यह धारणा ठीक नहीं हैं जिस प्रकार दार्शनिक, वैज्ञानिक और साहित्यकार ब्रह्म के स्वरूप को निरूपित नहीं कर सके हैं। ठीक उसी प्रकार मनोवैज्ञानिक भी केवल दी गई बुद्धि की परिभाषाओं के आधार पर बुद्धि के स्वरूप का अध्ययन नहीं कर सकते है। बुद्धि शब्द एक विश्लेषण हैं संज्ञा नहीं। यह एक अमूर्त संप्रत्यय हैं जिसे व्यक्ति के व्यवहार के आधार पर समझा जा सकता हैं।

बुद्धि की परिभाषा :–

वेबस्टर शब्दकोष के अनुसार – ''बुद्धि ज्ञान ग्रहण करने एवं उसे व्यवहार में लाने की योग्यता हैं।

बुद्धि की परिभाषाओं को तीन वर्गो में विभाजित किया जाता हैं :–

(1) वातावरण के साथ समायोजन की योग्यता – स्टर्न के अनुसार '' नवीन आवश्यकताओं में अपने विचारों को चैतन्यपूर्वक समायोजन कर लेने की व्यक्ति की साधारण क्षमता ही बुद्धि हैं''

बर्ट के अनुसार ''बुद्धि अपेक्षाकृत नवीन परिस्थितियों में अच्छी तरह से अभियोजित करने की योग्यता हैं।

(2) सीखने की योग्यता – बंकिघम के अनुसरा ''बुद्धि सीखने की योग्यता हैं''

मैक्डूगल के अनुसार ''बुद्धि वह शक्ति हैं जिसके द्वारा अतीत के अनुभवों के प्रकाश में जन्मजात प्रवृत्ति में सुधार किया जा सकता हैं''।

(3) अमूर्त चिन्तन की योग्यता –

टरमन के अनुसार ''एक व्यक्ति उसी अनुपात में बुद्धिमान हैं जिस अनुपात में वह अमूर्त चिन्तन करने योग्य हैं।

बिने के अनुसार ''किसी समस्या के समाधान उसके विषय में तर्क करना तथा किसी निश्चित निर्णय पर पहुंचना बुद्धि की आवश्यक क्रियाएं हैं।

GURUKPO Get Instant Access for Your Study Related Queries...

## बुद्धि के प्रकार

थार्नडाइक के अनुसार ''बुद्धि कई प्रकार की शक्तियों का समूह हैं'' । मोटे रूप में उन्होने बुद्धि को तीन भागों में बांटा हैं –

यान्त्रिक बुद्धि | अमूर्त बुद्धि | सामाजिक बुद्धि

**यान्त्रिक बुद्धि** – यान्त्रिक बुद्धि को गामक बुद्धि भी कहते हैं। इसका सम्बन्ध यन्त्रों और मशीनों से हैं। यान्त्रिक बुद्धि से सम्पन्न व्यक्ति अच्छे कारीगर, मैकेनिक और अच्छे इन्जीनियर होते हैं जिन बालकों में घड़ी ठीक करने या अन्य यन्त्र ठीक करने की क्षमता होती हैं वे बालक यान्त्रिक बुद्धि से पूर्ण होते हैं।

**अमूर्त बुद्धि** – यह बुद्धि ज्ञान अर्जन में सहायता करती हैं। यह बुद्धि शब्दों, प्रतीकों व चिन्हों के प्रति प्रतिक्रिया करने की योग्यता हैं लिखने–पढ़ने गणित व इतिहास सभी विषयों में इस बुद्धि की आवश्यकता है। गणितज्ञ व दार्शनिकों के विचारों में अमूर्त बुद्धि प्रतिबिम्ब होती हैं।

**सामाजिक बुद्धि** – सामाजिक बुद्धि व्यक्तियों की सामाजिक कुशलताओं से सम्बन्धित होती हैं यह व्यक्तियों में मिलनसारिता ,प्रेम, दया, सहयोग, समायोजन आदि के रूप में परिलक्षित होती हैं। बुद्धि परीक्षणों का प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा हैं। विद्यालयों में, सेना में, कर्मचारियों के चयन में, मानसिक पिछड़ेपन की पहचान में, औद्योगिक प्रतिष्ठानों में, उपचार में, बाल अपराध के विरोध व उपचार में तथा अनुसन्धान में इनका महत्वपूर्ण योगदान हैं । शिक्षा में इनकी उपयोगिता निम्न बिन्दुओं से स्पष्ट हो जाती हैं –

1. चयन करने में – विभिन्न कक्षाओं में उपयुक्त विद्यार्थियों को चयन करने में बुद्धि परीक्षणों का उपयोग किया जाता हैं।
2. वर्गीकरण करने में – विद्यार्थियों की उनकी मस्तिष्क संरचना के आधार पर वर्गीकरण करने में भी बुद्धि परीक्षणों की भूमिका हैं। विद्यालयों में बालकों को कक्षा में औसत, पिछड़े प्रतिभाशाली समूहों में वर्गीकृत करने में बुद्धि परीक्षणों का उपयोग किया जाता हैं।
3. प्रोन्नति हेतु मापन – बुद्धि परीक्षणों को उपलब्धि परीक्षणों के साथ प्रयोग करते हुए विद्यार्थियों को अग्रिम कक्षा में उन्नति देने हेतु प्रयोग में लाया जाता हैं।
4. अधिगम प्रक्रिया को बेहतर बनाने हेतु – बुद्धि परीक्षणों के परिणाम अध्यापकों को उनकी अधिगम शिक्षण प्रक्रिया का आयोजन करने में सहायक होते हैं। क्रो एंड क्रो ने कहा है कि बुद्धि परीक्षणों के परिणाम अध्यापक को यह जानने में सहायता देते हैं कि विद्यार्थी क्या सीख सकते हैं व किस गति से सीख सकते हैं।
5. आंकाक्षा को निर्धारित करने में – बुद्धि परीक्षण व्यक्ति की सम्भाव्य क्षमता का सही मापन कर उसकी आंकाक्षा स्तर को निर्धारित करता हैं।

GURUKPO Our Instant Access for your Study Related Queries...

6. निर्देशन हेतु – व्यक्तिगत, शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन देने हेतु बुद्धि परीक्षणों का प्रयोग विद्यार्थियों के लिए किया जाता हैं।
अधिगम कठिनाईयों व भावात्मक समस्याओं को दूर करने पर क्या प्राप्त किया जा सकता हैं ? किस व्यवसाय में प्रवेश लिया जाय ? जैसी समस्याओं का समाधान बुद्धि परीक्षणों के माध्यम से किया जा सकता हैं।
7. निदान हेतु – बुद्धि परीक्षाओं का प्रयोग व्यक्तियों की मानसिक कार्यात्मकता के निदान व विभेद में किया जाता हैं।
8. व्यवहार सम्बन्धी कठिनाईयों का पता लगाने के लिए – बालकों के व्यवहार सम्बन्धी समस्याओं के पीछे कभी–कभी बुद्धि एक कारण या तत्व के रूप में कार्य करती पायी जाती हैं। विद्यार्थियों की असन्तोषजनक शैक्षिक उपलब्धि का भी वह कभी–कभी कारण होती हैं। अतः निदानात्मक रूप में उपर्युक्त स्थिति में बुद्धि परीक्षण द्वारा विद्यार्थियों की बुद्धि का मापन करना आवश्यक हो जाता हैं।
9. मूल्याकंन की वैधता हेतु – बुद्धि परीक्षणों का प्रयोग मूल्यांकन की वैधता की जांच करने हेतु भी किया जाता हैं। विषयों के प्राप्ताकों के साथ बुद्धि परीक्षा के अंको को भी जोड़ा जा सकता हैं।
10. शोध कार्य हेतु – शिक्षा तथा मनोविज्ञान के क्षेत्र में सम्पन्न शोधों में उपकरण के रूप में भी आवश्यकतानुसार प्रायः प्रयोग में लाई गयी हैं। इनके माध्यम से चयन, वर्गीकरण, निदान तथा भविष्य कथन सम्बन्धी समस्याओं का समाधान करने में अपेक्षित सफलता प्राप्त हो सकती हैं।

8. **व्यक्तित्व से आप क्या समझते हैं ? इसके प्रत्यय व विकास को लिखों ?**
**What do you mean by personality. Give its concept and development**

**उत्तर** व्यक्तित्व शब्द अंग्रेजी भाषा के पर्सनेल्टी (personality)का हिन्दी रूपान्तर हैं। यह शब्द लैटिन के 'परसोना' (persona) से विकसित हैं जिसका अर्थ हैं नकली चेहरा (mask) या मुखौटा । प्राचीनकाल में व्यक्त्वि से अभिप्राय शारीरिक रचना, स्वरूप, वेशभूषा इत्यादि से लगाया जाता हैं । जो व्यक्ति बाहय गुणो से जितना अधिक प्रभावित कर सकता था । वह उतना ही अधिक प्रभावशाली माना जाता था, परन्तु वास्तविकता यह है कि व्यक्तित्व का निर्धारण एक कारक से नही होता। व्यक्तित्व के निर्धारण में अनेक कारक योग देते हैं।

**व्यक्तित्व की परिभाषाएं**

आलपोर्ट के अनुसार '' व्यक्तित्व व्यक्ति में उन मनोदैहिक व्यवस्थाओं के संगठन हैं जो वातावरण के साथ उसका अपूर्व नियोजन निर्धारित करता हैं''।

वैलेनटाइन के अनुसार ''व्यक्तित्व जन्मजात और अर्जित प्रवृत्तियों का योग हैं''।

बोरिंग के अनुसार '' व्यक्तित्व, व्यक्ति का अपने वातावरण के साथ अपूर्व और स्थायी समायोजन हैं।

मन के अनुसार '' व्यक्तित्व एक व्यक्ति के पठन व्यवहार के तरीकों, रूचियों, दृष्टिकोणों, क्षमताओं और तरीको का सबसे विशिष्ट संगठन हैं''।

**व्यक्तित्व की विशेषताएं –**

1. व्यक्तित्व जन्मजात और अर्जित प्रवृत्तियों का योग हैं।
2. आन्तरिक गुणों से व्यक्ति बनता हैं जो उसकी गतिशीलता को प्रकट करती है।
3. व्यक्तित्व एक मनोशारीरिक प्रणाली हैं जिससे वातावरण में समायोजन किया जाता हैं।
4. व्यक्तित्व अपने वातावरण के साथ अपूर्व तथा स्थायी समायोजन है।
5. व्यक्ति के व्यवहारों, ढंगो, रूचियों तथा दृष्टिकोणों की क्षमताओं का विशिष्ट संगठन हैं।
6. व्यक्तित्व मूल प्रवृतियों और अनुभवों के द्वारा अर्जित संस्कारों का योग हैं।
7. मनुष्य की आदतों, लक्षणों तथा दृष्टिकोणों की व्यवस्था प्रणाली हैं।
8. व्यक्तित्व शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटकों का संयुक्त योग हैं।
9. व्यक्तित्व में वंशानुक्रम तथा पर्यावरण दोनो प्रकार के घटकों का योग होता हैं।
10. व्यक्तित्व में विभिन्न गुणों का एकीकरण होता है।
11. व्यक्ति के अपने निजी गुणों तथा जीवन शैली को व्यक्तित्व कहते है।
12. व्यक्तित्व से विशिष्टीकरण होता हैं।
13. व्यक्तित्व स्वभाव एवं चारित्रिक गुणों का अद्भूत मिश्रण हैं।

**व्यक्तित्व का प्रत्यय एवं विकास**

व्यक्तित्व का गठन हमारे विकास की विभिन्न अवस्थाओं से होता हैं। इसमें निहित कारक वंशानुक्रम तथा पर्यावरणजन्य तत्वों से सम्बन्धित होते हैं। इसमें निहित कारक आनुवांशिक तथा पर्यावरणजन्य तत्वों से सम्बन्धित होते हैं। व्यक्तित्व के विकास की व्याख्या करने में तीन प्रकार के सिद्धान्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं। प्रथम मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्त जिनके अनुसार व्यक्ति के जीवन में उसके प्रारम्भिक पांच वर्ष उसके व्यक्तित्व निर्माण में महत्त्वपूर्ण माने जाते है। द्वितीय अधिगम सिद्धान्त जिसमें यह स्वीकार किया जाता हैं कि अधिगम के बगैर व्यक्तित्व का विकास सम्भव नहीं है। तृतीय रोल सिद्धान्त जिसके अनुसार व्यक्तित्व के विकास हेतु प्राणी को नवीन भूमिकाओं का निर्वाह कर लेने की दक्षता अर्जित करना आवश्यक समझा जाता है।

9. **व्यक्तित्व मापन की प्रक्षेपी तकनीकियां क्या हैं ? प्रक्षेपी तकनीकियों के गुण एवं न्युनताओं का मूल्याकंन कीजिए ।**
**What are the projective techniques in assessment of personality ? Evaluate the merits and limitations of projective techniques.**

**उत्तर** प्रक्षेपण (projection) तकनीक वह अचेतन प्रक्रिया हैं जिसके द्वारा व्यक्ति अपने अवगुण दोष दूसरों के सर थोप देता हैं। स्वच्छ न लिख पाने पर हम स्याही या पैन की निब ठीक न होने का बहाना बना देते हैं । प्रक्षेपण द्वारा व्यक्ति अपने भाव, विचार, आकाक्षांए, इच्छाएं, निराशाएं, संवेग आदि दूसरों में देखता हैं और वातावरण में उपस्थित किसी वस्तु अथवा व्यक्ति में अपने दोषों को स्थानान्तिरत कर देता हैं।

'प्रक्षेपण' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग सिगमण्ड फ्रॉयड ने रक्षायुक्ति के रूप में किया। इसमें अहं, चिन्ता के प्रति अपनी रक्षा करता हैं। अहं अपने को स्वतन्त्र रूप से स्पष्ट नहीं करता हैं। स्व के दुःखद विचार किसी घटना के माध्यम से बाहर आते हैं। अतः प्रक्षेपण वह प्रक्रिया हैं जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपने अभावो, विचारों, भावनाओं, इच्छाओं, संवेगो, स्थायी भावो एवं आन्तरिक संघर्षो या अन्य व्यक्तियों या बाह्य जगत के माध्यम से सुरक्षात्मक रूप प्रस्तुत करना चाहता हैं। दूसरे शब्दों में प्रक्षेपण का अर्थ अपने विचारों, भावों एवं कमियों को अन्य व्यक्तियों या पदार्थो के माध्यम से व्यक्त करता हैं।

हीली, ब्रानर तथा बावर के अनुसार – प्रक्षेपण सुखवाद सिद्धान्त के अन्तर्गत एक सुरक्षात्मक प्रक्रिया हैं जिसके माध्यम से अहं बाह्य जगत में अपनी अचेतन इच्छाओं को फैंकता हैं जिन्हे यदि चेतन में प्रवेश करने दिया जाय तो वे अहं के लिए दुःखदायी हैं।

मैकडोनल्ड लैडेल के अनुसार "प्रक्षेपण एक ऐसी मनोवैज्ञानिक रचना हैं जिसमें व्यक्ति दूसरों पर ऐसी भावनाओं एवं संवेगो को प्रक्षेपित करता हैं जिनका आपने दमन कर लिया हैं।

वारेन के अनुसार "यह बाह्य जगत में दमित मानसिक प्रक्रियाओं को आरोपण करने की प्रवृति हैं"।

**प्रक्षेपी तकनीकियों के प्रकार**

**1. बोध परीक्षण (apperception test)**

a. प्रसंगात्मक बोध परीक्षण (Thematic Apperception Test, TAT)

b. बालक बोध परीक्षण (Children Apperception Test, CAT)

**2. स्याही के धब्बों का परीक्षण**

a. रोर्शा स्याही धब्बे का परीक्षण

b. होल्जमैन स्याही धब्बे का परीक्षण

**3. शब्द साहचर्य परीक्षण**

a. मुक्त साहचर्य परीक्षण

b. आंशिक साहचर्य परीक्षण

c. नियन्त्रित साहचर्य परीक्षण

**4.चित्र साहचर्य परीक्षण**
**5.वाम्य पूर्ति परीक्षण**
**6.मनो नाटकीय विधि**
**7.खेल प्रविधि**
**8.शाब्दिक प्रक्षेपण परीक्षण**

**प्रमुख प्रक्षेपी प्रविधियां**

(1) **<u>प्रासंगिक बोध परीक्षण या कथा प्रसंग परीक्षण–</u>** इस परीक्षण का निर्माण मनोवैज्ञानिक मुरे एवं मार्गन द्वारा सन् 1935 में किया। इसे कथानक बोध परीक्षण भी कहते हैं। इसके द्वारा व्यक्तित्व की विशेषताओं की जांच की जाती है। इस परीक्षण में 30 चित्रों का प्रयोग किया जाता हैं। इसमें 10

चित्र महिलाओं के लिए, 10 चित्र पुरूषों के लिए तथा 10 चित्र दोनों के लिए होते हैं।साधारणतः अन्तिम 10 चित्रों का ही प्रयोग किया जाता हैं। इस परीक्षण के द्वारा सामान्य एवं स्नायु दौर्बल्य व्यक्तियों के व्यक्तित्व को समझने का प्रयास किया जाता हैं।

(2) **बालक बोध परीक्षण –** इस परीक्षण का निर्माण सन् 1948 में ल्योपोल्ड बैलक ने किया। यह उसे 11 वर्ष की आयु के मध्य में बालकों के व्यक्तित्व का मापन करती हैं। इसमें चित्रों की संख्या 10 होती हैं। ये चित्र किसी ना किसी जानवर से सम्बन्धित होते हैं जो कि मनुष्यों की तरह व्यवहार करते दिखाई देते हैं इसके माध्यम से बच्चों की विभिन्न रूचियों, क्रियाओं और समस्याओं के विषय में जानकारी प्राप्त की जा सकती हैं।

(3) **रोर्शा स्याही –धब्बा परीक्षण –** इस विधि का आविष्कार स्वीट्जरलैण्ड के प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक हरमैन रोर्शाक ने किया। इस परीक्षण में 10 प्रमाणित स्याही लगे धब्बे के कार्डो का प्रयोग किया जाता हैं। इस विधि का प्रकाशन 1921 में हुआ तथा इसका प्रयोग प्रायः मानसिक रोगों की चिकित्सा के लिए किया जाता हैं। 10 कार्डो में पांच बिल्कुल काले हैं, दो काले और लाल हैं और तीन में कई रंग मिले हैं।

**प्रक्षेपण तकनीकी के गुण –**

1. इन प्रविधियों के माध्यम से व्यक्ति के सम्बन्ध में सही जानकारी प्राप्त होती हैं एवं उसे किसी बात को छिपाने का अवसर नहीं मिल पाता।
2. ये व्यक्ति की सुस्त इच्छाओं को प्रकट करने में सहायक होती हैं।
3. इनकी परीक्षण सामग्री पूर्णतः अनिर्देशित अथवा अर्द्धनिर्देशित होती है।
4. ये प्रविधियाँ व्यक्ति के अचेतन मन को समझने का एकमात्र उपकरण हैं।
5. इन परीक्षणों की स्थिति प्रायः संदिग्ध होती हैं, फलतः व्यक्ति को सही अनुमान लगाने का अवसर नहीं मिल पाता है।
6. परीक्षण की विषय–वस्तु अनेकार्थक होती है। अतः विषयी गलत व सही उत्तरों में अन्तर स्पष्ट नहीं कर पाता।
7. परीक्षण की सम्पूर्ण सामग्री प्रकाशित रूप में होने से इनका प्रकाशन प्रायः स्थिर होता है।
8. इनमें परीक्षक की मनोवृत्ति हावी नहीं रहती ।
9. परीक्षण की फलाकंन प्रक्रिया एवं व्याख्या वस्तुनिष्ठ होती है।
10. इन परीक्षणों की विश्वसनीयता एवं वैधता दोनों उच्चस्तर की होती है।
11. ये परीक्षण व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का स्पष्ट चित्र खीचतें है।

**प्रक्षेपण तकनीकियों की सीमाएं –**

1. यह विधि छोटे बच्चों के लिए लाभकारी नहीं ।
2. इसमें अधिक समय और धन की आवश्यकता होती हैं
3. इस परीक्षण के संचालन के लिए कुशल व्यक्तियों की आवश्यकता होती है सभी लोग इसका संचालन नहीं कर पाते।
4. इस परीक्षण में वस्तुनिष्ठता का अभाव रहता है।

# Unit –4

# Adjustment

1. **"समायोजन वह प्रक्रिया हैं, जिसके द्वारा प्राणी अपनी आवश्यकताओं और इन आवश्यकताओं की पूर्ति को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों में संतुलन रखता हैं" किसी परिभाषा हैं ?**
   अ.) बोरिंग लैगफिल्ड व वेल्ड
   ब.) गेट्स व अन्य
   स.) क्रो व क्रो
   द.) फ्रोबेल (अ)

2. **समायोजन के प्रकार हैं –**
   अ.) स्थापना समायोजन
   ब.) मानसिक मनोरचनाएँ
   स.) रचनात्मक समायोजन
   द.) उपर्युक्त सभी (अ)

3. **समायोजन की विधियाँ हैं –**
   अ.) प्रतिगमन
   ब.) प्रक्षेपण
   स.) उदत्तीकरण
   द.) उपर्युक्त सभी (द)

4. **समायोजन नहीं कर पाने का कारण हैं –**
   अ.) कुण्ठा ब.) तनाव
   स.) द्वन्द द.) उपर्युक्त सभी (द)

5. **व्यक्तित्त्व का कुसमायोजन प्रकट करता हैं –**
   अ.) आक्रमणकारी के रूप में
   ब.) पलायनवादी प्रवृत्तियों में
   स.) झगडालु प्रवृत्तियों में
   द.) उपर्युक्त सभी (द)

6. **समायोजन क्या हैं ? समायोजन और मानसिक स्वास्थ्य के संबधो की व्याख्या कीजिए।**
   **What is adjustment? Explain the relationship between adjustment and mental health.**

**उत्तर** व्यक्ति के जीवन में अनेक बार ऐसी परिस्थितियां आती हैं जिसमें व्यक्ति कठिनाई का अनुभव करता हैं तथा अपनी इच्छाओं, आवश्यकताओं व अभिलाषाओं की पूर्ति वह तत्काल नहीं कर पाता हैं और ना ही वह संतुष्ट हो पाता हैं। उदाहरण के तौर पर कई छात्र अपनी कक्षा की वार्षिक परीक्षा में प्रथम आने का लक्ष्य लेकर चलता हैं और दूसरे छात्रों की प्रतियोगिता के कारण वह अपनी कम योग्यता के कारण वह अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल होता है तो वह निराश तो होता ही हैं परन्तु अपने इस मौलिक लक्ष्य को ध्यान में रखकर आगे आने वाली परीक्षा में अपने पूर्व के लक्ष्य को प्राप्त करने की वह चेष्टा करता हैं और वह उसे प्राप्त भी कर लेता हैं। अतः यह उस बालक का अपनी परिवेश व परिस्थितियों के साथ इस प्रकार का समायोजन हैं।

समायोजन दो शब्दों से मिलकर बना है।– सम+आयोजन। सम् का अर्थ हैं– भली –भांति अच्छी तरह या समान रूप से और आयोजन का अर्थ हैं व्यवस्था। अर्थात अच्छी तरह व्यवस्था करना । अतएव समायोजन का अर्थ हुआ –सुव्यवस्था या अच्छे ढंग से परिस्थितियों को अनुकूल बनाने की प्रक्रिया। जिसमें कि व्यक्ति की आवश्यकताएं पूरी हो जाए मानसिक द्वन्द न उत्पन्न हो पाएं।

गेट्स एवं अन्य विद्वानों ने लिखा है कि ''समायोजन शब्द के दो अर्थ हैं एक अर्थ में निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया हैं जिसके द्वारा व्यक्ति स्वंय और पर्यावरण के बीच अधिक सांमजस्यपूर्ण सम्बन्ध रखने के लिए अपने व्यवहार में परिवर्तित कर देता हैं। दूसरे अर्थ में–समायोजन एक सन्तुलित दशा हैं जिस पर पहुचने पर हम उस व्यक्ति को सुसमायोजित कहते है।

बोरिंग तथा लैगफिल्ड यह मानते है कि समायोजन वह प्रक्रिया हैं जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं और इन आवश्यकताओं की पूर्ति को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों में संतुलन रखता हैं।

**<u>समायोजन तथा मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सम्बन्ध</u>**

समायोजन और मानसिक स्वास्थ्य दोनों के मध्य गहरा रिश्ता हैं। चूंकि समायोजन को मानसिक स्वास्थ्य पूर्णरूपेण प्रभावित करता हैं। यदि मानसिक स्वास्थ्य ठीक नहीं होगा अर्थात् अच्छा नहीं होगा तो समायोजन हो ही नहीं सकता। मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन दोनो के सम्बन्धो को निम्नांकित बिन्दुओं के माध्यम से समझा जा सकता हैः–

1. शारीरिक स्वास्थ्य और क्रियाओं के सम्बन्ध में समायोजन व मानसिक स्वास्थ्य का सम्बन्ध – मानसिक स्वास्थय और समायोजन के सम्बन्धों को जानने की कड़ी में मुख्य कड़ी शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ क्रियाओं और मानसिक दृष्टि से स्वस्थ क्रियाओं के मध्य उचित सम्बन्धों में यदि देखा जाये तो यह बात सामने आती हैं कि समायोजन और मानसिक स्वास्थ्य होने की बात कही गयी हैं। वही दूसरी और समायोजन को गति प्रदान करने हेतु मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य की क्रियाओं में भी सहसम्बन्ध होना अनिवार्य हैं। चूंकि मनुष्य अपने अस्तित्व को बनाये रखने में उसके वातावरण और परिस्थितियों का समायोजन उसका साथ निभाता हैं और उसी वातावरण के समायोजन से जोड़ा हुआ तथा उसकी शारीरिक स्वास्थ्य

की क्रियाएं मानसिक स्वास्थ्य की क्रियाएं तथा उन क्रियाओं जिसके साथ उसका अपना समायोजन का पक्ष हैं।

2. मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन का कार्य व्यवहार की दृष्टि से सम्बन्ध– इस परिपेक्ष्य में हमें यह जानना होगा कि मानसिक स्वास्थ्य और उससे सम्बन्धित समायोजन की कड़ी के परिपेक्ष्य में मानसिक संघर्ष क्यों उत्पन्न होता हैं ? यदि हम यह जाने कि मानसिक संघर्ष या मानसिक असंतुलन के पीछे क्या पक्ष हैं ? इसकी व्याख्या इस प्रकार से हो सकती हैं जैसे –

   i. अभिप्रेरक से व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए प्रेरित होता हैं।यह शारीरिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरक अपनी भूमिका निभाते हैं। और जब यह अभिप्रेरक किसी भी वजह से असफल हो जाते हैं तब मानसिक द्वन्द की स्थिति उत्पन्न होती हैं और यदि व्यक्ति या बालक मानसिक रूप से संतुष्ट नहीं है तो उसका वातावरण के साथ समायोजन नहीं हो सकता, जिसका सीधा–सीधा प्रभाव व्यक्ति के कार्य व्यवहार से परिलक्षित होता हैं।

   ii. उदाहरण के तौर पर विभिन्न प्रकार की बाधाये मानसिक संघर्ष की व कुण्ठाओं का कारण होती हैं। यह बाधाये सामाजिक, आर्थिक, मानसिक इत्यादि किसी भी क्षेत्र की हो सकती हैं। इससे व्यक्ति का मानसिक असंतुलन व अशांति पैदा होती हैं जिसके रहते हुए मानसिक संतुलन की बात को नहीं सोचा जा सकता।

   iii. प्राकृतिक प्रकोपों में भी मानसिक द्वंद व संघर्ष का कारण हो सकता हैं। समय–समय पर विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक बाधायें मानसिक तनाव उत्पन्न करती हैं जैसे बाढ़, भूकम्प, वर्षा, तुफान, युद्ध इत्यादि जिनके चलते हुए मानसिक तनाव व संघर्ष बना रहता हैं और व्यक्ति या बालक अपने वातावरण के साथ समायोजन नहीं कर सकते । इसी तरह से कई और भी ऐसे द्वंद हो सकते हैं जिनके कारण व्यक्ति या बालक मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं रहता और यही कारण हैं कि उसका समायोजन नहीं हो पाता हैं।

3. अधिगम व शिक्षण की दृष्टि से मानसिक स्वास्थ्य व समायोजन का सम्बन्ध – शिक्षण और अधिगम दोनों के उद्देश्य प्राप्ति मे मानसिक पक्ष की गहराई में जाये तो हम यह महसूस करते हैं कि कोई भी व्यक्ति जो मानसिक रूप से अस्वस्थ हैं तो उसका शिक्षण एवं अधिगम के वातावरण के साथ समायोजन होना एक कोरी कल्पना हैं भौतिक एवं शारीरिक रूप से तो वह व्यक्ति या बालक हमें वहा दिखा सकता हैं परन्तु अधिगम व मानसिक दृष्टि से उसकी उपस्थिति पर्याप्त नहीं हैं।

4. सामाजिक वातावरण को प्रभावित करने वाले कारकों की दृष्टि से मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन का सम्बन्ध – सामाजिक वातावरण व्यक्ति या बालक में अनेक प्रकार के द्वंद विकार पैदा करता हैं जिसके कारण व्यक्ति की या बालक की सोच प्रभावित होती हैं । इस सोच के प्रभावित होने से उसका समायोजन अपनी परिस्थितियों के साथ नहीं हो पाता हैं और वह सदैव आंतरिक तनाव, असुरक्षा तथा स्वतन्त्रता का अभाव महसुस करता हैं और विद्यालय तथा कक्षा में सदैव असमायोजित होकर अपना कार्य करता हैं।

5. वंशानुगत कारकों की दृष्टि से मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन का सम्बन्ध – मानसिक स्वास्थ्य के कारकों को यदि खोजा जाये तो वंशानुगत कारक भी एक महत्वपूर्ण पक्ष हैं

जिसके रहते कोई भी व्यक्ति या बालक मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं हो सकता और यदि वह बालक मानसिक रूप से स्वस्थ्य नहीं हैं तो उसका अपने परिवेश के साथ स्वस्थ समायोजन भी काल्पनिक हैं। अतः बालक व व्यक्ति के समायोजन की दृष्टि से उसका मानसिक रूप से स्वस्थ होना एक अनिवार्य शर्त सा बन जाता है।

6. पारिवारिक दृष्टि से मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन का सम्बन्ध– व्यक्ति का अपना पारिवारिक पक्ष जीवन उसकी अपनी निजी जिदंगी का प्रभाव मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता हैं। उदाहरण के तौर पर उसका घरेलु वातावरण, परिवार का विघटन, माता–पिता व बड़ों का व्यवहार, गरीबी का होना, उच्च आदर्शो का पाया जाना, घर का अनुशासन, परिवार में तनाव इत्यादि कुछ ऐसे पक्ष हैं जिसका पारिवारिक जीवन के साथ जुड़े हुए हैं। अतः बालक के या व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले यह पारिवारिक पहलू या तत्व अपनी भूमिका निभाते हैं अतः मानसिक स्वास्थ्य इससे दूषित होता हैं और जब मानसिक स्वास्थ्य दूषित होता हैं तो समायोजन की बात शीघ्रता से आती ही नहीं हैं इस प्रकार से हम यह पाते हैं कि मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन दोनो का आपसी गहरा सम्बन्ध हैं दोनो में एक गहराई तक तारतम्यता हैं, सहसम्बन्ध हैं । अतः हम यह कह सकते हैं कि मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन अपनी प्रकृति व अपने सम्प्रत्यय में अलग–अलग होते हुए भी उद्देश्य व्यवहार और कार्य प्रणाली की दृष्टि से आंतरिक रूप से आपस में सम्बन्धित हैं।

7. **अध्यापक के समायोजन से क्या तात्पर्य है ? समायोजन एक यांत्रिकी के रूप में स्पष्ट कीजिए ।**
**What do you mean about adjustment of teacher ? Adjustment as a mechanism explain it.**

**उत्तर** अध्यापक का समायोजन – शिक्षण की दृष्टि से अध्यापक का समायोजित होना बहुत अनिवार्य हैं अतः अध्यापक के समायोजन के सम्बन्ध में शिक्षाविदों द्वारा मनोवैज्ञानिकों ने इस बात को बढ़ावा दिया हैं कि अध्यापक का यदि समायोजन नहीं होगा अर्थात् अध्यापक का व्यवहार समायोजित नहीं होगा तो वह अपने शिक्षण को प्रभावी नहीं कर सकेगा। अतः जिसका सीधा प्रभाव शिक्षार्थियों की अधिगम प्रक्रिया पर पड़ेगा। अतः शिक्षाविद् अध्यापक के असमायोजित व्यवहार के पीछे कुछ कारणों को उत्तरदायी मानते हैं।

<u>अध्यापक के असमायोजित होने के उत्तरदायी कारक –</u>

1. वंशानुगत कारक – कई बार असमायोजन के पीछे अध्यापक के वंश से जुड़े हुए घटक सीधे रूप में इस पर प्रभाव डालते हैं
2. कार्यभार की अधिकता होना – शिक्षक को अपने दैनिक कार्यो के अलावा और भी कई कार्यो में लगाया जाता हैं– जनगणना, पशु गणना, मतदान, जनचेतना इत्यादि। जिसकी वजह से अध्यापक का कार्यभार बढ़ जाता हैं।
3. अध्यापकों में राजनीति का होना – अध्यापकों में असमायोजित व्यवहार के पीछे एक प्रमुख कारण अध्यापकों में बढ़ती हुई राजनीति का हैं आपसी गुटबंदी का हैं, आपसी द्वेषभावों का हैं।

4. गैर जिम्मेदार प्रतिवेदन तथा निरीक्षण – इसमें अध्यापक का असमायोजित व्यवहार कई बार उभर कर सामने आता हैं। जब उसके उच्च अधिकारी द्वारा गैर जिम्मेदारी से निरीक्षण किया जाता हैं उसका प्रतिवेदन भी गैर जिम्मेदारी से प्रस्तुत किया जाता है।
5. अध्यापक में बढ़ता मानसिक द्वंद– वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में अध्यापक का सामाजिक स्तर बहुत नगण्य हैं ओर दूसरी और समाज में अध्यापक के पद को किसी भी तरह से सार्वजनिक रूप से प्रतिष्ठा का न मानना।
6. नाखुश पारिवारिक जीवन – कई बार नाखुश पारिवारिक जीवन भी अध्यापकों के असमायोजित व्यवहार का कारण होता हैं। अतः अध्यापकों के असमायोजित होने के पीछे दाम्पत्य जीवन में कड़वाहट व बिखराव एक महत्वपूर्ण कारक हैं।

अध्यापक के समायोजन को बढ़ावा देने हेतु सुझाव :–

1. अध्यापकों में संतोष, आत्मबल की भावना को जाग्रत करना चाहिए ।
2. अध्यापको को सम्मान देना चाहिए।
3. समाज में अध्यापक स्तर को ऊँचा उठाना चाहिए।
4. अध्यापकों द्वारा परिस्थितियों तथा सामाजिक एवं अन्य चुनौतियो का सामना करना चाहिए।
5. प्रशासकों व अध्यापकों के मध्य बढ़िया तालमेल को बनाये रखना चाहिए।

समायोजन एक यांत्रिकी के रूप में – समायोजन चूंकि एक प्रक्रिया हैं जिसको मनोवैज्ञानिक एक यांत्रिकी के रूप में प्रस्तुत करते हैं। समायोजन के परिपेक्ष्य में मनोवैज्ञानिकों ने इस एक बचावात्मक यांत्रिकी की उपमा दी हैं जिसके मुख्य पक्ष इस प्रकार हैं –

1. यांत्रिकी के रूप में इसकी प्रत्यक्ष विधि – समायोजन चूंकि व्यक्ति या बच्चे के मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक संघर्ष को प्रभावित करता हैं। उस परिपेक्ष्य में इसको एक यांत्रिकी प्रस्तुत करते हुए इसकी प्रत्यक्ष विधि की चर्चा की गई हैं जिसके मुख्य आयाम इस प्रकार हैं –

(i) बाधा को नष्ट करना या दूर करना– जब किसी उद्देश्य की प्राप्ति में कोई बाधा उत्पन्न हो जाती हैं तो व्यक्ति उस बाधा को दूर कर सकता हैं या उसको समाप्त करके अपना रास्ता साफ कर लेता हैं और लक्ष्य की ओर बढ़ता हैं। जैसे –डिमेथियस यूनान के एक राजनीतिज्ञ थें उनमें कुछ शारीरिक दोष होने के कारण वे जनता में भाषण देने के योग्य नहीं थे। ऐसी स्थिति में उन्होनें अपने मुंह में कंकड़ रखकर बोलने का प्रयत्न किया और अपनी शारीरिक बाधाओं पर विजय प्राप्त की। बाधा को व्यक्तिगत या सामूहिक दोनो रूपों मे हल किया जा सकता हैं।

(ii) कार्यविधि में परिवर्तन – जब व्यक्ति यह देखता हैं कि बाधा को सरलता से पार नही किया जा सकता हैं तब वह अपनी पहली योजना पर फिर से विचार करता हैं और लक्ष्य प्राप्ति के साधनों में परिवर्तन करता हैं। जैसे जब एक विद्यार्थी एक वर्ष परीक्षा में असफल रहता हैं तो अगले वर्ष वह अपनी पहले की विधि में (काम के घण्टों में) परिवर्तन करता हैं।

(iii) प्रतिस्थापन – यदि व्यक्ति अपने लक्ष्य तक पहुँचने मे असफल रहता हैं तो वह उस लक्ष्य को छोड़कर दूसरा अपना लेता हैं , जैसे यदि कोई नौजवान मानसिक सीमाओं

के कारण डाक्टर नहीं बन पाता तो अध्यापन को अपना लक्ष्य बना लेता हैं। हमारे समाज में ऐसे बहुत व्यक्ति हैं जो स्थापन के द्वारा अपने आपको समाज में समायोजित कर रहे हैं।

(iv) पलायन – बाधाओं से परेशान होकर व्यक्ति कार्य को छोड़ देता हैं। बार–बार फेल होने पर छात्र पढ़ना छोड़ देते हैं।

2. अप्रत्यक्ष– इन विधियों के अन्तर्गत मनुष्य मानसिक द्वंद, निराशा, असफलता से बचने के उपाय करते हैं। इन विधियों के अन्तर्गत ये उपाय प्रयोग में लाये जाते हैं–

(i) आत्मीकरण– आत्मीकरण द्वारा व्यक्ति अपना सम्बन्ध दूसरे व्यक्तियों से स्थापित करता हैं। व्यक्ति समाज तथा समुदाय एवं संस्थानो के आदर्शो तथा मान्यताओं के अनुकूल स्वंय को ढालने का प्रयत्न करता है । आत्मीकरण के द्वारा व्यक्ति अपने व्यक्तित्व के विकास में प्रयत्न करता हैं।

(ii) औचित्य स्थापन – अपनी असफलताओं का दोष दूसरो पर थोपकर अपनी बात के औचित्य की स्थापना करते हैं। परीक्षा में फेल हुआ छात्र परीक्षको, कठिन प्रश्न पत्र तथा अध्यापकों पर दोष मढ़ता हैं। औचित्य स्थापन दो प्रकार का होता हैं–

(a) कोई व्यक्ति किसी कार्य असफल होने पर उस कार्य में ही दोष निकालने लगता हैं। इसे खट्टे अंगूर भी कहते हैं।

(b) दूसरे प्रकार के औचित्य स्थापन में व्यक्ति अरूचि कार्य में फंसकर जब उससे बाहर नहीं निकल पाता, तब वह उसे ही अच्छा बताने लगता हैं। इसे मीठे नींबू कहते है।

(iii) क्षतिपूर्ति – व्यक्ति जीवन के एक क्षेत्र की कमी को जीवन के दूसरे क्षेत्र में पूरा करता हैं। शारीरिक दृष्टि से कमजोर व्यक्ति व्यायाम द्वारा हृष्ट–पुष्ट और बलशाली बन जाता हैं। क्षतिपूर्ति दो प्रकार की होती हैं (1) प्रत्यक्ष रूप से (2) अप्रत्यक्ष रूप से। प्रत्यक्ष रूप से व्यक्ति जिस क्षेत्र मे कमजोर होता हैं उसी में सफलता प्राप्त करता हैं और अप्रत्यक्ष में व्यक्ति दूसरे क्षेत्र में ख्याति प्राप्त करता हैं।

(iv) प्रक्षेपण – मानसिक चिन्ताओं से बचने के लिए व्यक्ति अपने कार्यो की सफलता को दूसरे व्यक्तियों की असफलता पर आरोपित करता हैं। जैसे एक खिलाड़ी जब खेल में हार जाता है तो दूसरे साथियों को हार के लिए दोषी ठहराता हैं। प्रक्षेपण से व्यक्ति चिन्तामुक्त हो जाता हैं।

(v) दमन – अनेक कारणों से व्यक्ति अपनी बहुत सी इच्छाओं को व्यक्त नहीं कर पाता हैं। इच्छाओं का दमन किसी ना किसी रूप में प्रत्येक व्यक्ति करता हैं। दमन जानबुझकर नहीं किया जाता हैं वरन् स्वंय होता हैं कभी–कभी हमारे विचार अचेतन रूप में इतने गहरे पहुँच जाते हैं कि उनको फिर से याद करने के लिए मनोवैज्ञानिक विधियों की आवश्यकता नहीं पड़ती हैं।

(vi) प्रत्यावर्तन – जब व्यक्ति मानसिक कठिनाईयों से दुःखी हो जाता हैं तो वह अपने साधारण व्यवहार की ओर लौट जाता है । जैसे कि शोर से परेशान होकर वह जोर–जोर से रोने लगता हैं।

(vii) प्रतिक्रिया निर्माण – तीव्र इच्छाओं और वृत्तियों का दमन कभी–कभी इनसे विपरीत प्रतिक्रियाओं के निर्माण में बदल जाता हैं जैसे–जिस व्यक्ति की काम सम्बन्धी

इच्छाओं को दमन हो गया हो वह चेतन रूप में कामुकता के विपरीत हो जाता हैं और बड़े–बड़े आदर्शो को लोगो के सामने रखता हैं।

(viii) पलायन – पलायन के द्वारा व्यक्ति अपने आपको मानसिक द्वंद की परिस्थिति से बचा लेता हैं। वह उस समस्या को हल करने का प्रयत्न ही नहीं करता हैं। व्यक्ति की जब वह प्रक्रिया अधिक हो जाती हैं तो वह एकान्तप्रिय हो जाता हैं और उसमें प्रत्येक कार्य के प्रति विपरीत दृष्टिकोण बन जाता हैं।

(ix) मतरंग–यथार्थ जीवन की असफलताओं से परेशान होकर मनुष्य कल्पना का आश्रय लेता हैं। इस प्रकार वह दिवास्वप्न की स्थिति से स्वंय को मानसिक तनाव से बचाता हैं।

8. **कुसमायोजन के तत्व कौन–कौनसे हैं ? अच्छे समायोजन की विशेषताएं बताइये ।**
**What is elements of maladjustment? Give the characteristic of good adjustment.**

**उत्तर** कुसमायोजन की प्रक्रिया में जब एक व्यक्ति अपने को जैविक मनोवैज्ञानिक और सामाजिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि पाने मे असमर्थता का अनुभव करता हैं। इससे उसकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं तथा सामाजिक अपेक्षाओं के बीच में असन्तुलन बन जाता हैं परिणामतः मनोवैज्ञानिक सन्तुलन में बाधा आती है जब व्यक्ति साम्यावस्था को प्राप्त नहीं करता है तो वह कुसमायोजित हो जाता हैं कुसमायोजन के तत्व निम्नलिखित हैं :–

1. **तनाव** – (Tension) जब व्यक्ति वातावरण या समय की मांग के अनुरूप व्यवहार नहीं कर पाता हो तनाव का शिकार होता हैं। ऐसी स्थिति में अपनी क्षमताओं को कम पाता हैं।
2. **दुश्चिन्ता – (**Anxiety) दुश्चिन्ता मे व्यक्ति व्यग्र हो जाता हैं । फ्रायड के अनुसार ''व्यक्ति की जो इच्छा अधूरी रह जाती हैं वह अचेतन मन में चली जाती हैं। लेकिन यह इच्छा फिर से चेतन स्तर में आना चाहती हैं। दुश्चिन्ता इसी आन्तरिक चेतन व अचेतन के बीच संघर्ष का लक्षण हैं। दुश्चिन्ता की मात्रा परिस्थिति व समय के अनुसार बदलती रहती हैं।
3. **दबाव** – (Stress) व्यक्ति को दबाव प्रतियोगिता के कारण होता हैं। कभी–कभी अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए भी व्यक्ति दबाव महसूस करता हैं।

   **मॉरिस के अनुसार** – दबाव एक प्रकार की मनोवैज्ञानिक प्रतिबद्ध अवस्था हैं जिसमें व्यक्ति यह अनुभव करता हैं कि उसे एक विशिष्ट भावना के अनुसार रहना या पहुंचना या व्यवहार करना हैं अथवा उसे तीव्र गति से हो रहे परिवर्तनों के साथ अनुकूलन करना हैं।

   **काफर तथा एपली के अनुसार** – दबाव प्राणी की वह स्थिति हैं जब वह स्वंय को खतरे में पाता हैं और अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए समस्त उर्जा को लगा देता हैं।
4. **भग्नाशा** – (Frustration) जब व्यक्ति अपने उद्देश्य की प्राप्ति नहीं करता व कभी–कभी उद्देश्य प्राप्ति की राह में बाधाएं आती हैं। तब मनुष्य अपने आप से विश्वास खो बैठता है और असफल होने के भाव से उसमें भग्नाशा की स्थिति पैदा होती हैं।
   **रोजेनविंग के अनुसार** – ''जब जीव की जीवन सम्बन्धी आवश्यकताओ की सन्तुष्टि में कुछ या अनेक अविजित बाधाएं उत्पन्न होती हैं तब उसमें कुण्ठा उत्पन्न होती है''।

कुण्ठा संवेगात्मक प्रतिबद्धता की वह अतिरंजित अवस्था हैं जिसमें व्यक्ति तनाव, परेशानी, क्रोध, क्लेश, चिन्ता और दबाव के मिलेजुले रूप को अनुभव करता हैं।

5. **द्वंद** – (Conflict) बोरिंग, लैगफील्ड तथा वेल्ड के अनुसार '' द्वंद व्यक्ति की वह अवस्था हैं जिसमें विरोधी तथा समान शक्तियां, प्रेरणाएं एक ही समय में कार्यरत होती हैं''। द्वंद दो परस्पर विरोधी कार्य–पद्धतियों की संक्रिया हैं। द्वंद की स्थिति में व्यक्ति को दो माँगो आवश्यकताओं, मूल्यों जैसी प्रवृतियों में से किसी एक का चयन करना होता हैं एक स्थिति का चयन करना बहुत कठिन होता हैं। द्वंद की इस स्थिति को इस उदाहरण के द्वारा समझा जा सकता है। वनिता की दो दिन बाद परीक्षा हैं और आज उसकी अभिन्न मित्र के विवाह में भी सम्मिलित होना हैं। इस स्थिति में उसके मस्तिष्क में द्वन्द की स्थिति उत्पन्न हो जाती हैं।

**अच्छे समायोजन की विशेषताएं**

एक मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति में निम्न विशेषताएं पायी जाती हैं –

1. अनुकूलनशीलता – एक व्यक्ति जो वातावरण की बदलती परिस्थितियों के प्रति ग्रहयता व नमनीयता बनाये रखता हैं।
2. सामाजिक जागरूकता –सुसमंजित व्यक्ति सामाजिक रूप से जागरूक होता हैं व सामाजिक गतिविधियों में भाग लेता हैं। भावात्मक अस्थिरता की स्थिति, दबाव व तनाव की स्थिति में अपने कार्यो को उचित प्रकार से करता हैं।
3. अपने व्यवहार के प्रति सूझ–सुसमंजित व्यक्ति अपने व्यवहार का निरन्तर मुल्यांकन करता हैं। वह अन्तर्दर्शन के आधार पर अपने व्यवहार में संशोधन करता रहता हैं।
4. इच्छाओं व समाज सम्मत व्यवहार में समरसता – सुसंमजित व्यक्ति समाज विरोधी कार्यो में भाग नहीं लेता हैं । उसके जीवन के उद्देश्य सामाजिक मानकों के अनुरूप होते हैं। वह अन्य व्यक्तियों के साथ समरसता बनाये रखता हैं।
5. अपनी सकारात्मक विशेषताओं व कमियों की समझ।
6. आत्मसम्मान के साथ–साथ दूसरों का सम्मान करना।
7. पर्याप्त आकाक्षां स्तर
8. मूलभूत आवश्यकताओं की सन्तुष्टि
9. दूसरो में दोषों का न ढूँढने की प्रवृत्ति
10. प्रतिकूल परिस्थितियों को झेलने की क्षमता
11. विश्व का वास्तविक प्रत्यक्षीकरण
12. चिन्तन में परिपक्वता
13. स्वतन्त्र निर्णय लेने की क्षमता
14. दूसरो के प्रति संवेदी समझ

**काल रोजर्स के अनुसार –**

1. भावनाओं की स्वीकृति
2. आत्मप्रतिष्ठा

3. दूसरो के साथ अच्छे सम्बन्ध
4. पूर्ण रूप से वर्तमान में जीना
5. यह सीखते रहना कि कैसे सीखना हैं ?
6. नए विचारों की ओर खुलापन
7. स्वतन्त्र निर्णय लेने की योग्यता
8. सृजनशीलता

**एरिक्सन के अनुसार**

1. दूसरो में तथा अपने में विश्वास
2. अपने पर नियन्त्रण रखने की क्षमता
3. उत्तरदायित्व लेने की योग्यता
4. कुशल तथा उद्यमशील होना
5. स्पष्ट तथा समन्वित विकास
6. दूसरो के साथ गहरे, विश्वासी सम्बन्ध विकसित करने की क्षमता
7. आत्मपूर्णता अर्थात् अपने को जैसा हैं वैसा स्वीकार करना।

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

# Unit –5

# Group Dynamic

1. **"समूह दो या दो से अधिक व्यक्तियों की इकाई हैं जो किसी विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति के लिए सम्पर्क में आते हैं व सम्पर्क को सार्थक समझते हैं" यह कथन हैं –**

अ.) कैटल ब.) मैकडेविड
स.) शैरिफ व शैरिफ द.) मिल्स (द)

2. **मानव समूह की विशेषता हैं–**

अ.) अभिप्रेरणात्मक आधार ब.) संगठन
स.) अर्न्तनिर्भरता द.) उपर्युक्त सभी (द)

3. **"डाइनैमिक्स ऑफ ग्रुप्स" पुस्तक के लेखक हैं–**

अ.) एच.ए. थैलन ब.) मैकडेविड
स.) मिल्स द.) कैटल (अ)

4. **"समूह गतिकि सम्प्रत्यय का प्रतिपादन किया–**

अ.) कार्टराइट ब.) कुर्ट लेविन
स.) मिल्स द.) स्किनर (ब)

5. **समूह के प्रकार हैं –**

अ.) आमने –सामने का समूह ब.) ठहरा हुआ समूह
स.) अर्मूत समूह द.) उपर्युक्त सभी (द)

6. **समूह गतिशास्त्र किसे कहते हैं ? समूह व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्वों को बताइये ।**
**What is group dynamics ? What are the factors affecting group behavior ?**

**उत्तर** समूह गतिकि सम्प्रत्यय का प्रतिपादन कुर्ट लेविन ने 1945 में किया। लेविन के अनुसार समूह गतिकि से तात्पर्य समूह के विशेषकर छोटे समूह के उन बलों एवं प्रभावों से होता हैं जिनसे सदस्यों का व्यवहार एक निश्चित दिशा में परिवर्तित होता हैं। समूह गतिकि का तात्पर्य समूह के भीतर के उन बलों एवं दबावो से होता हैं जो सदस्यों के व्यवहारों को इस सीमा तक प्रभावित करते हैं कि उनमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आ जाते हैं । समूह में प्रत्येक सदस्य का एक अपना विशिष्ट स्थान होता हैं। प्रत्येक सदस्य अपने इस विशिष्ट पद या स्थान के अनुसार व्यवहार करता हैं।

प्रत्येक सदस्य का व्यवहार अन्य सदस्यों द्वारा किये गये व्यवहारों द्वारा प्रभावित होता हैं। समूह में समरसता तथा विघटनकारी दोनो तरह के बल कार्य करते हैं। इन दोनो तरह के बलों से सदस्यों का व्यवहार प्रभावित होता हैं तथा समूह में परिवर्तन आता हैं। जब सदस्यों में समरसता रहती हैं। ऐसी स्थिति में सदस्यों की अधिकतम आवश्यकताओं की पूर्ति होती हैं। जब सदस्यों के लक्ष्य तथा समूह के लक्ष्य में संघर्ष होता हैं या सदस्यों के बीच उचित संचार में बाधा होने से उनके बीच

दीवार खड़ी हो जाती हैं तो समूह में विघटनकारी बल अधिक सक्रिय माने जाते हैं। ऐसी स्थिति में समूह का अस्तित्व खतरे में पड़ जाता हैं।

अंग्रेजी का शब्द 'Dynamics' जिसका अर्थ हैं गति, यह ग्रीक भाषा के शब्द से निकला हैं जिसका अर्थ हैं। शक्ति। समूह गतिशीलता उन शक्तियों का ज्ञान देता हैं जो एक समूह में सक्रिय होती हैं उन शक्तियों का अध्ययन समूह गतिशीलता का अन्वेषण का विषय होता हैं। यह अन्वेषण दिशा में होते हैं जिससे यह पता चल जाए कि शक्तियां किस प्रकार उभरती है? किन परिस्थितियों में ये शक्तियां सक्रिय होती हैं? क्या इनकें परिणाम होते हैं ? और किस प्रकार से उनका रूपान्तर किया जा सकता हैं ? समूह विज्ञान की जानकारी किस उद्देश्य के लिए उपयोग करना ?

मनोवैज्ञानिक क्रेच एवं क्रेचफील्ड के अनुसार ''समूह गतिशीलता का अर्थ हैं समूहो के अन्तर्गत होने वाले परिवर्तन''

प्रो0 ट्रो. ने समूह गतिशीलता को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''समूह गतिशीलता एक वैज्ञानिक अध्ययन हैं जो विभिन्न समूह सम्बन्धों में व्यक्ति के व्यवहार और विभिन्न आन्तरिक एवं बाह्य परिस्थितियों के अन्तर्गत समूह प्रक्रियाओं का कभी–कभी उनकी प्रभावकारिता को बढ़ाने के विचार से अध्ययन करता हैं।,

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि समूह गति–विज्ञान समूह व्यवहार को परिचालित करने वाली शक्तियों का वैज्ञानिक अध्ययन हैं।

**समूह गतिशीलता की विशेषताएं –**

1. समूह गतिशीलता के कारण समूह का प्रभाव क्षेत्र बनता हैं और इसे बढ़ाया जा सकता हैं।
2. सामाजिक अन्तः प्रक्रिया के सकारात्मक आधार हैं – सहयोग, प्रतिस्पर्धा, व्यवस्था एवं परिपाक इसमे समूह का विकास होता हैं। इनके परिवर्तन संघर्ष सामाजिक अन्तः प्रक्रिया का नकारात्मक आधार जिसके कारण समूह का विघटन हो सकता हैं।
3. व्यक्ति की तरह समूह का भी एक व्यवहार हैं जो परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तनशील होता हैं।
4. समूह गतिशीलता वैज्ञानिक ढंग से यह जानने का प्रयास करता है कि समूह की विभिन्न आन्तरिक एवं बाह्य दशाओं में व्यक्ति का व्यवहार और सामूहिक प्रक्रियाएं किस प्रकार होती हैं।

**समूह व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्व :–**

प्रत्येक समूह का एक समूह व्यवहार होता हैं और यह समूह व्यवहार आन्तरिक तथा बाह्य परिस्थितियों के कारण परिवर्तित होता रहता हैं। यह परिवर्तन समूह को विकास की दिशा में भी ले जा सकता हैं और विनाश की ओर भी प्रवृत्त कर सकता हैं। समूह की दिशा प्रगति की ओर होने पर इसमें दृढ़ता आती हैं और समूह के प्रत्येक घटक की आवश्यकताओं की पूर्ति होती हैं। व्यक्ति के साथ–साथ समूह भी विकसित होता हैं। इसके विपरीत यदि समूह की दिशा गति की ओर होती हैं तो समूह की दृढ़ता में कमी आती हैं व्यक्ति समूह को अपने अनुसार मोड़ने का प्रयास करते हैं



GURUKPO Get Instant Access to your Study Related Queries.

और अन्त में समूह बिखर जाता हैं अतः ऐसे तत्वों का अध्ययन करना आवश्यक हैं जिनके कारण समूह एवं उनके सदस्य प्रगति की ओर बढ़ते हैं ये तत्व हैं :–

1. प्रजातान्त्रिक प्रक्रिया–यदि समूह के लक्ष्यों के निर्धारण में समूह के क्रिया–कलापों के समायोजन में ओर आपसी अन्तः सम्बन्धों को बढ़ाने में प्रजातान्त्रिक प्रक्रिया अपनायी जाती हैं तो सदस्यों की भागीदारी बढ़ती हैं उन्हें सन्तुष्टि मिलती हैं और उसे समूह की दृढ़ता उत्तरोत्तर बढ़ती हैं।
2. व्यक्तिगत एंव समूह लक्ष्य – प्रत्येक समूह के अपने लक्ष्य होते हैं। व्यक्ति किसी समूह से तभी जुड़ता हैं जब उसके व्यक्तिगत लक्ष्यों की पूर्ति उस समूह में रहते हुए हो सकती हैं जब भी व्यक्ति को लगता हैं कि उसके व्यक्तिगत लक्ष्यों की पूति समूह में रहने में नहीं हो पा रही हैं तो वह समूह को त्याग देता हैं। यदि समूह के लक्ष्यों को सदस्यों की इच्छाओं के अनुरूप समय–समय पर संशोधित किया जाता रहता हैं तो सदस्यगणों को आकर्षण समूह के प्रति बना रहता हैं और समूह दृढ़तर होता जाता हैं।
3. प्रतिस्पर्धा– समूह के व्यक्तियों के लिए परस्पर प्रतिस्पर्धाओं के आयोजन से उनका समूह के प्रति आर्कषण बढ़ता हैं। जब ये प्रतिस्पर्धाएं खेल भावना को बढ़ाने में प्रजातान्त्रिक प्रक्रिया अपनायी जाती हैं तो सदस्यों की भागीदारी बढ़ती हैं, उन्हें सन्तुष्टि मिलती है और उससे समूह की दृढ़ता उत्तरोतर बढ़ती हैं।

7. **कक्षा एक समूह के रूप में स्पष्ट कीजिए ? समूह गतिकि का अधिगम पर क्या प्रभाव पड़ता है ? Classroom as a group explain it ? What is the impact of classroom on learning.**

**उत्तर** कक्षा एक समूह के रूप मे कार्य करता हैं। कक्षा एक अनुदेशनात्मक समूह के रूप में अपनी सदस्यों की आवश्यकतओं की पूर्ति एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता करता हैं। कक्षा की संरचना विभिन्न विषयों के मध्य स्थायी सम्बन्धों के प्रतिमान को इंगित करती हैं प्रत्येक कक्षा की अपनी अलग संरचना होती हैं। कक्षा की संरचना विभिन्न शक्तियों से मिलकर बनता है। संस्था की वैधानिक आवश्यकता भी एक शक्ति हैं। संस्था के द्वारा नियम पालन व अध्यापकों और विद्यार्थियों को नियमों की अनुपालना की बाध्यता कक्षा के संगठन को निर्धारित करती हैं। पब्लिक स्कूलों की वित्तीय व्यवस्था उसके कक्षा समूहों की संरचना का निर्धारण करती हैं। विद्यालय द्वारा प्रतिबन्धित विद्यालयी सभा व निर्वाचित कमेटीया भी कक्षा समूह के संगठन को प्रभावित करेगी। समुदाय के रीति–रिवाज व सांस्कृतिक कारक भी कक्षा संरचना को प्रभावित करते हैं। समुदाय मे अधिनायकवादी संरचना से प्रेरणा पाकर कक्षाओं में भी अधिनायकवादी संगठन देखने को मिलता हैं। विद्यालयी समुदाय के विद्यार्थी, अध्यापक, प्रधानाध्यापक व अन्य कर्मचारी विद्यालयी समुदाय की आवश्यकताएं भी महत्त्वपूर्ण हैं। कक्षा समूह में विद्यार्थियों की आवश्यकताएं निश्चित रूप से उसके संगठन को प्रभावित करेगी। विद्यार्थियों की आवश्यकताएं मुख्य रूप से वृद्धि एवं विकास, सामाजिक विकास, मित्रता व अधिगम से सम्बन्धित हैं। अन्य व्यक्तियों (कर्मचारी, अध्यापक, प्रधानाध्यापक) की आवश्यकताएं भी कक्षा संगठन को प्रभावित करती हैं।

कक्षा की संरचना को उसके विभिन्न आयामों को जानकर समझा जा सकता हैं। संगठनात्मक आयाम को विभिन्न दृष्टिकोणों से जाना जा सकता हैं। फलैन्डरस ने तीन आयाम – सत्ता, लक्ष्योन्मुखता व सामाजिक पहुँच उपलब्धता का सुझाव दिया हैं।

किसी भी समूह के द्वारा निर्धारित किया कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण कारक हैं। कार्य संरचना को फलैन्डर्स ने लक्ष्योन्मुखता कहा है को सम्मिलित किया जा सकता है। यदि कक्षा के विद्यार्थी प्रदत्त कार्य को महत्वपूर्ण मानते हैं तो वे अपनी सारी उर्जा उसे पूर्ण करने में लगा देते हैं। इससे कक्षा का संगठन निर्धारित होता हैं।

द्वितीय आयाम सत्ता संरचना हैं। कक्षाओं में सत्ता प्रतिमान अलग–अलग पाये जाते हैं कक्षा में प्रायः सत्ता का केन्द्रीयकरण अध्यापक में होता हैं। परन्तु कई बार विद्यार्थियों में सत्ता का विभाजन विभिन्न प्रकार से किया जाता हैं यह विद्यार्थियो को दिये गये दायित्वों पर निर्भर करता हैं।

तृतीय आयाम सम्प्रेक्षण संरचना हैं जो सत्ता की तरह ही महत्त्वपूर्ण हैं सम्प्रेक्षण की प्रक्रिया एक तरफा हो सकती हैं, जब अध्यापक विद्यार्थियों से अधिकांश समय तक बातचीत करता हैं व विद्यार्थी निष्क्रिय बने रहते हो ऐसा सम्प्रेषण एक तरफा होता हैं जब विद्यार्थियो की सम्प्रेक्षण प्रक्रिया में सहभागिता होती हैं तो इसे प्रवाह चक्र सम्प्रेषण कहा जाता हैं। सम्प्रेषण संरचना सामाजिक पहुंच को प्रभावित करती हैं।

जे.एन. मोरेनो ने कक्षा में सम्बन्धों का अध्ययन करने के पश्चात् सदस्यों के मध्य निम्न प्रतिमान पाए–

(1) अत्यन्त लोकप्रिय –ये बालक कक्षा में अधिकांश बालकों के द्वारा पसन्द किये जाते हैं।

(2) एकान्त में रहने वाले – इन बालकों को कक्षा में कोई भी पसन्द नहीं करता।

(3) जोड़े –ऐसे बालक एक दूसरे को पसदं करते हैं।

(4) श्रंखला –कक्षा में ऐसी श्रंखलाएं पायी जाती हैं। जिससे एक बालक दूसरे बालक को व दूसरा बालक तीसरे बालक को व इस प्रकार श्रृंखला चलती है।

अध्यापक बालकों की विभिन्न गतिविधियों में मित्रता के प्रतिमानों को समझे। अध्यापक कक्षा में एकाकी बालको को पहचान कर समूह में उनके समायोजन में सहायता करे। अध्यापक को यह भी देखना होगा कि कक्षा में समूह जाति व धर्म के आधार पर न बने।

कक्षा समूह में सम्बन्ध – कक्षा की संरचना समूह में सदस्यों के मध्य सम्बन्धों को निर्धारित करती हैं। इन सम्बन्धों की व्याख्या समूह के कार्यो के सन्दर्भ में की जानी चाहिए। किसी भी समूह का महत्त्वपूर्ण कार्य निर्णय लेना हैं। निर्णय कौन लेता है व कैसे लेता हैं। अन्र्तसम्बन्धों को निर्धारित करता हैं यदि अध्यापक सभी निर्णय स्वंय लेता हैं व विद्यार्थी उन निर्णयों के अनुरूप कार्य करते हैं तो अध्यापक विद्यार्थी सम्बन्ध औपचारिक व अधिनायकवादी होगें। यदि निर्णयन प्रक्रिया में विद्यार्थियों की राय सम्मिलित है तो अन्र्तसम्बन्धों का स्वरूप अलग होगा। इसी प्रकार से कार्य को करने एवं समस्या समाधान भी अन्र्तसम्बन्धों के निर्धारण के महत्त्वपूर्ण कारक हैं।

अन्य समूहों से सम्बन्ध – कक्षा समूह अन्य समूहों से भी सम्बन्ध स्थापित करता हैं। एक कक्षा समूह को दूसरे कक्षा समूहों के साथ तालमेल करना पड़ता हैं। विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार के व्यवहारों को उन्नत करने के लिए यह आवश्यक हैं। विभिन्न कक्षा समूह समान विद्यालयी कार्यक्रमों यथा वाद–विवाद, प्रार्थना सभा, खेल, विद्यालयी सभा, सांस्कृतिक कार्यक्रमों, सामुदायिक कार्य व उत्सवों में आपस में मिलते हैं। कक्षा कार्यक्रमों की सफलता उनके भव्य सम्बन्धों के प्रतिमान पर निर्भर करती हैं।

**<u>कक्षा समूह का अधिगम पर प्रभाव</u>** – कक्षा समूह की अधिगम को प्रभावित करने में अहम भूमिका हैं इस निम्न बिन्दुओं के आधार पर समझा जा सकता हैं।

(1) समसमूह टयूटरिंग – वर्तमान में शैक्षिक उपलब्धि चयन का आधार हैं। ऐसी स्थिति में विद्यार्थी अपनी एकमात्र क्षमता का अधिकतम उपयोग करने हेतु बहुत बार अपने समवयस्क समूह द्वारा अधिगम में सहायता में समान प्रस्थिति व बौद्धिक क्षमता वाले विद्यार्थी अपने साथियों को सक्रिय सहायता प्रदान कर ज्ञान एवं कौशलो का अर्जन करते हैं। अपने ज्ञान व कौशलो का अर्जन कर सकते है। समूह के सदस्य एक दूसरे की अभिवृत्तियों , पसन्दगियों व मनोवृत्तियों को सकारात्मक रूप में प्रभावित करते हैं।

(2) सदयोगात्मक अधिगम – इस प्रकार का अधिगम भी समूह में सम्भव हैं। जब दो से अधिक विद्यार्थी एक साथ मिलकर किसी विषय या प्रोजेक्ट पर मिलकर कार्य करते हैं तो समूह में कार्य करते समय एक दूसरे के अधिगम अनुभवों व विचारों का लाभ उठाते हुये अधिगम के उच्चतम मानदण्डों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता हैं । एलबर्ट बान्डुरा एवं लेव वयोगटस्की जो कि सामाजिक अधिगम सिद्धांत के पक्षधर हैं ने भी सहयोगात्मक अधिगम का समर्थन किया हैं।

(3) अभिप्रेरणा – कक्षा समूह में विभिन्न समूह प्रक्रियाएं विद्यार्थियों को अभिप्रेरणा प्रदान करती हैं। अभिप्रेरणा अधिगम को अग्रसर करती हैं समूह प्रक्रियाएं इन विद्यार्थियों को अभिप्रेरित कर अधिगम सम्भाव्य को पूर्ण रूप से विकसित करने में सहायता प्रदान करती हैं।

(4) लक्ष्य निर्धारण – कक्षा समूह की प्रभावशीलता में योगदान देने वालो में प्रमुख तत्व लक्ष्यों का निर्धारण हैं। कक्षा समूह की रचना ही अधिगम के लिये की जाती हैं। विद्यार्थी व अध्यापक मिलकर लक्ष्यों व कार्यो का निर्धारण करते हैं। समूह के लक्ष्य व्यक्ति को अपने लक्ष्यो के निर्धारण एवं प्राप्ति के लिये दिशा–निर्देश देते हैं। समूह विद्यार्थियों के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहभागी बनकर सहयोग प्रदान करता हैं।

(5) सम्प्रेषण – किसी भी अनुदेशनात्मक समूह की मूलभूत आवश्यकता संदेश ग्रहण की हैं। कक्षा समूह की केन्द्रिय समस्या सम्प्रेषण की हैं। सम्प्रेषण के द्वारा विद्यार्थियों तक ज्ञान कौशलों, मूल्यों व अभिवृत्तियों को विकसित किया जाता हैं। अध्यापक विद्यार्थियों से पृष्ठ पोषण प्राप्त कर सम्प्रेषण की प्रभावशीलता को जानकर अपने सम्प्रेषण को प्रभावी बनाने के लिए योजना बनाता हैं जो अन्ततः अधिगम के सुगमीकरण को प्रभावित करता हैं। कक्षा समूह में समरसता, सह–अस्तित्व, चिन्तन व जीवन कौशलों का अधिगम बिना औपचारिकता के सहज, सरल व प्रभावी ढंग से होता है। अतःयह कहा जा सकता हैं कि समूह प्रक्रियाएं अधिगम में सहायता प्रदान करती हैं।

# Unit 6

# Innovation in Teaching Learning

1. **"अभिक्रमित अनुदेशन से अभिप्राय अनुभवों की उस नियोजित श्रृंखला से जो उद्दीपक अनुक्रिया के सम्बन्ध के सन्दर्भ प्रभावशाली माने जाने वाली दक्षता की ओर अग्रसर करती हैं" परिभाषा हैं –**
   अ.) एन.एस. मापी ब.) सूसन मार्कल
   स.) एस्पिच एवं विलियम्स द.) स्मिथ एवं मूटे
   (स)

2. **रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन के प्रतिपादक हैं–**
   अ.) क्राउडर ब.) स्किनर
   स.) थार्नडाइक द.) पावलव
   (ब)

3. **शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन के प्रतिपादक हैं –**
   अ.) स्किनर ब.) क्राउडर
   स.) पावलव द.) सूसन मार्कल
   (ब)

4. **कम्प्यूटर आधारित अनुदेशन के प्रकार हैं–**
   अ.) ट्यूटोरियल कार्यक्रम ब.) अभ्यास कार्यक्रम
   स.) अन्वेषण कार्यक्रम द.) उपर्युक्त सभी
   (द)

5. **कम्प्यूटर के प्रमुख तत्व पाये जाते हैं–**
   अ.) अदा ब.) प्रदा
   स.) केन्द्रीय इकाई द.) उपर्युक्त सभी (द)

8. **शिक्षा तकनीकी का अर्थ और उपागमों को विस्तार से बताइये ?**
   **Explain the meaning and approaches educational technology ?**

**उत्तर** शिक्षा तकनीकी का अर्थ :– शिक्षा तकनीकी शब्द दो शब्दों से मिलकर बना हैं। शिक्षा+तकनीकी। शिक्षा तकनीकी ऐसा विज्ञान हैं, जिसके आधार पर शिक्षा के विशिष्ट उद्देश्यों की अधिकतम प्राप्ति के लिए विभिन्न व्यूह रचनाओं का निर्धारण तथा विकास किया जा सकता हैं। शिक्षा के उद्देश्यों के निर्धारण के बाद शिक्षा तकनीकी इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समुचित व्यूह रचना का चुनाव करती हैं और उनका प्रयोग करती हैं व्यूह रचना के प्रयोग करने के पश्चात् मूल्यांकन किया जाता हैं कि कहां तक इन उद्देश्यों की प्राप्ति हो सकी हैं और यदि नहीं तो किस प्रकार का परिवर्तन



GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

किया जाये जिससे उद्देश्यों की अधिकतम प्राप्ति की जा सके। यह शिक्षा तकनीकी का एक पक्ष हैं जिसे हम अनुदेशन तकनीकी कह सकते हैं।

शिक्षा तकनीकी का दूसरा अर्थ हैं– शिक्षण की क्रियाओं का यान्त्रिकरण करना।

अतः शिक्षा तकनीकी का प्रादुर्भाव छापने की मशीन से हुआ हैं।

शिक्षा तकनीकी की विशेषताएँ –

डब्ल्यू केनेथ रिचमांड – ''शिक्षा तकनीकी अधिगम परिस्थितियों की समुचित व्यवस्था के प्रस्तुत करने से सम्बन्धित हैं जो शिक्षण एवं प्रशिक्षण के लक्ष्यों को ध्यान में रखकर अनुदेशन को सीखने का उत्तम साधन बनाती हैं''।

लेथ के अनुसार ''अधिगम तथा अधिगम की परिस्थितियों के वैज्ञानिक ज्ञान का प्रयोग जब शिक्षण तथा प्रशिक्षण के सुधारने तथा बनाने में किया जाता हैं, तब उसे शिक्षण तकनीकी कहते हैं''

एस.के. मिश्रा के अनुसार –''शिक्षा तकनीकी को उन पद्धतियों तथा प्रविधियो का विज्ञान माना जा सकता हैं जिनके द्वारा शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके''।

एस.एस. कुलकर्णी के अनुसार – ''तकनीकी तथा विज्ञान के आविष्कारों तथा नियमों का शिक्षा की प्रक्रिया में प्रयोग को ही शिक्षा तकनीकी कहा गया हैं ''

उपरोक्त परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकलता हैं कि –

1. शिक्षा तकनीकी पूर्णतः विज्ञान पर आधारित विषय हैं।
2. शिक्षा तकनीकी में विज्ञान तथा तकनीकी की सहायता से शिक्षा में किये गये प्रयोगों का अध्ययन किया जाता हैं।
3. तकनीकी चूंकि विज्ञान का व्यवहार में प्रयोग से सम्बन्ध रखती हैं। अतः शिक्षा तकनीकी व्यावहारिक पक्ष पर अधिक ध्यान देती हैं।
4. शिक्षा में निरन्तर विज्ञाना व तकनीकी की सहायता से नवीन प्रयोग हो रहे हैं। अतः शिक्षा तकनीकी विषय निरन्तर प्रगतिशील विषय के रूप में सामने आता हैं।
5. इसमें मनोविज्ञान पर आधारित व्यवस्थित क्रम में ज्ञान को प्रदान करने की प्रधानता दी जाती हैं।

**शिक्षा तकनीकी के उपागम**

लुक्सडेन ने शिक्षा तकनीकी में तीन उपागम बताये हैं–

(1) शैक्षिक तकनीकी प्रथम या कठोर उपागम
(2) शैक्षिक तकनीकी द्वितीय या मृदुल उपागम
(3) शैक्षिक तकनीकी तृतीय या प्रणाली उपागम

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

(1) **शैक्षिक तकनीकी प्रथम या कठोर उपागम**

इसे मशीन प्रणाली भी कहते हैं। इस उपागम का सर्वप्रथम प्रयोग 1964 में लुम्सडेन ने किया था। इस उपागम में श्रृव्य–दृश्य सामग्री को लिया जाता हैं। इस उपागम का आधार भौतिक विज्ञान तथा इंजीनियरिंग के सिद्धान्तों का शिक्षा में प्रयोग हैं। इस उपागम की मुख्य अवधारणा मशीनों की तकनीकों को शिक्षण की तकनीकी से सम्बन्धित करना हैं। इसका सम्बन्ध केवल अनुदेशन के ज्ञानात्मक पक्ष से होता हैं । क्यों कि मशीन केवल अनुदेशन का कार्य करती हैं। अतः इस उपागम में शिक्षण मशीने, भाषा प्रयोगशाला, लिग्वाफोन, रेडियो, टेलीविजन, टेपरिकॉर्डर, प्रोजेक्टर, कम्प्यूटर आदि की महत्त्वपूर्ण भूमिका हैं। इस मशीनीकरण द्वारा ज्ञान को संचित रखना, प्रसारित करना तथा विस्तार करना प्रभावी रूप से सम्भव हो पाया है।

(2) **शैक्षिक तकनीकी द्वितीय या मृदुल उपागम**

इस उपागम में मशीनों के स्थान पर शिक्षण तथा अधिगम के सिद्धान्तों का प्रयोग विद्यार्थियों के अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन हेतु किया जाता हैं इसके अन्तर्गत अभिक्रमित अनुदेशन आता हैं।

**इस उपागम में निम्न कार्य सम्मिलित हैं –**

a) कार्य विश्लेषण
b) शैक्षिक उद्देश्यों के व्यवहारगत परिवर्तन के आधार पर स्पष्ट लिखना।
c) शिक्षण व्यूह रचनाओं का उचित चयन करना।
d) पुनर्बलन देना ।
e) विषय वस्तु का मूल्यांकन करना।

इस उपागम में अदा (Input) प्रक्रिया (process) और प्रदा (output) पर बल दिया जाता हैं। इसमें

अदा– शिक्षण कार्य का विश्लेषण

प्रक्रिया– उद्देश्यों को व्यावहारिक शब्दावली मे लिखकर उचित शिक्षण विधियों का चयन

प्रदा– पुनर्बलन देना और मूल्यांकन करना है।

(3) शैक्षिक तकनीकी तृतीय या प्रणाली उपागम

→ वर्तमान में सर्वाधिक प्रचलित उपागम
→ यह हार्डवेयर उपागम और मृदुल उपागम को जोड़ने वाला उपागम हैं।
→ यह शिक्षा के क्षेत्र में आधुनिक उपागम हैं।
→ प्रणाली उपागम शिक्षार्थी केन्द्रित होता हैं।
→ यह उपागम समस्याओं के समाधान के लिए निर्णय पर पहुँचने की विधि हैं।
→ इस उपागम का सम्बन्ध प्रणाली अभियांत्रिकी (system engineering) से हैं।

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

इस प्रणाली उपागम को शिक्षा में एक ऐसी प्रणाली माना जाता हैं। जिसमें कुछ तत्व अदा (Input) के रूप में काम आते हैं फिर इन्हीं तत्वों को एक प्रक्रिया से गुजरना होता हैं जिनके परिणाम सदैव प्रदा (output) के रूप में प्राप्त होते हैं। इस प्रकार अदा में सदैव उद्देश्यों की प्राप्ति होती हैं।

इस उपागम का सम्बन्ध मूलतः प्रबन्ध (management) एवं प्रशासन (administration) से हैं। इसलिए इसे प्रबन्ध तकनीकी भी कहते हैं। इसकी सहायता से शिक्षा प्रशासन एवं प्रबन्धन को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया जाता हैं। जिससे इन्हें अधिक सुदृढ़ एवं प्रभावशाली बनाया जा सके।

9. **अभिक्रमित अनुदेशन का अर्थ और परिभाषा दीजिए , एक उदाहरण द्वारा रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन को समझाइये।**

**उत्तर** 1912 में ई.एन. थार्नडाइक ने अभिक्रमित अनुदेशन से मिलती–जुलती एक विधि की कल्पना की । 1920 में सिडनी एल. प्रेसी व इनके सहयोगियों ने एक ऐसी शिक्षण मशीन का निर्माण किया जिसकी सहायता से छात्रों के सम्मुख एक ऐसी प्रश्नों की श्रृंखला रखी जिसके प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देने पर सही या गलत की सूचना विद्यार्थियो को तुरन्त प्राप्त हो जाती थी।

1954 में हरवर्ड विश्वविद्यालय के प्रो0 बी.एफ. स्कीनर ओर जैम्स जी हॉलैण्ड ने शिक्षण में अभिक्रमित अनुदेशन के प्रत्यय का प्रतिपादन किया । इन्होने अधिगम के क्षेत्र में किया प्रसूत अनुबंधन (operant conditioning) नामक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

अभिक्रमित अनुदेशन का अर्थ :– अभिक्रमित अनुदेशन स्व अध्ययन की एक ऐसी विद्या हैं जिसमें विषय वस्तु को क्रमबद्ध रूप में छोटे–छोटे विभाजित कर छात्र को उसकी व्यक्तिगत विभिन्नताओं के आधार पर अपने अधिगम की जांच भी करता हैं।

**परिभाषाएं :–**

स्टाफेल के अनुसार – ''ज्ञान के छोटे–छोटे भागों को तार्किक क्रम में व्यवस्थित करने को अभिक्रम (sequience) तथा इसकी सम्पूर्ण प्रक्रिया को अभिक्रमित अनुदेशन कहते हैं''।

डी.एल. कुक :– अभिक्रमित अनुदेशन प्रशिक्षण विधियों के व्यापक प्रत्यय को स्पष्ट करते हुए प्रयुक्त एक विद्या हैं।

कोरे के अनुसार – ''अभिक्रमित अनुदेशन एक ऐसी शिक्षण प्रक्रिया हैं जिसमें बालक के वातावरण को सुव्यवस्थित कर पूर्व निश्चित व्यवहारों को उसमें विकसित कर लिया जाता है।

**अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताएँ**

(1) अभिक्रमित अनुदेशन स्व अध्ययन की एक विधि हैं।
(2) विषयवस्तु को छोटे–छोटे पदों या अंशो में तार्किक क्रम में व्यवस्थित किया जाता हैं। इन अंशो या पदों को फ्रेम कहा जाता हैं।
(3) शिक्षक की उपस्थिति अनिवार्य नहीं

(4) तत्काल प्रति पुष्टि
(5) उचित पुनबर्लन
(6) व्यक्तिगत विभिन्नताओं के आधार पर सीखने के अवसर
(7) इसमें विषयवस्तु समस्या का हल करने वाले प्रश्न उत्तरों के रूप में होती है। जिसके द्वारा शिक्षार्थियों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाया जाता हैं।
(8) अभिक्रमित अनुदेशन में उद्दीपन, अनुक्रिया तथा पुनबर्लन तीनों सक्रिय रहते हैं।
(9) अधिक प्रभावशाली प्रक्रिया।

**अभिक्रमित अनुदेशन के प्रमुख तत्व –**

1. पद/अंश/फ्रेम –अभिक्रमित अनुदेशन का मुख्य प्रत्यय हैं जिसके द्वारा अनुदेशन का कार्य किया जाता हैं तथा अध्ययन सामग्री व्यवस्थित की जाती हैं।
   फ्रेम के तीन भाग होते हैं –
   1. जिसमें सूचना दी जाती हैं।
   2. जिसमें प्रश्न पूछा गया।
   3. जिसमें उत्तर की जानकारी दी गयी।
2. अनुबोधन – शिक्षार्थी फ्रेम को पढ़कर उत्तर देने में असमर्थ होता हैं तो उसे उद्दीपकों द्वारा सहायता दी जाती हैं। यह ही अनुबोधन कहलाता हैं। जिस प्रकार अभिनेता के संवाद भूल जाने पर परदे के पीछे से एक शब्द बोलकर उसकी सहायता की जाती हैं जो उस संवाद की याद दिलाने में सहायक होती हैं।
3. उद्दीपक – शिक्षार्थी क्या व्यवहार करें ? शिक्षार्थी के व्यवहार को सही मार्ग प्रदान करने में सहायक तत्व उद्दीपक कहलाता हैं। जैसे फ्रेम में दी गई सूचनाएं एवं प्रश्न आदि।
4. अनुक्रिया – बालक प्रश्न को जानकर जो उत्तर अपनी नोटबुक में लिखता हैं। उसे अनुक्रिया कहते हैं। अभिक्रमित अनुदेशन के द्वारा वे ही अनुक्रिया करवाने का प्रयास किया जाता हैं जिनको की शिक्षार्थी के व्यवहार में परिवर्तन हेतु निर्घारित किया हैं।

(1) पहले वह फ्रेम को पढ़ता हैं
(2) फिर फ्रेम में पूछे गये प्रश्न का उत्तर लिखता हैं।
(3) अपने लिखे गये उत्तर की जांच करता हैं।
(4) इससे उसे प्रतिपुष्टि मिलती हैं तथा वह अगला फ्रेम पढ़ता हैं।
(5) अंत में शिक्षार्थी अपने सही उत्तरों को प्रतिवेदन के रूप में लिखकर शिक्षक के सम्मुख प्रस्तुत करता हैं।

पढ़ता हैं → लिखता हैं → जाँचता हैं → आगे बढ़ता → प्रतिवेदन प्रस्तुत करता हैं

GURUKPO Get Instant Access to your Study Related Queries...

## रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन

1954 में हरवर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बी.एफ. स्कीनर ने रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन का प्रतिपादन किया (जेम्स जी. हालेण्ड के सहयोग से) रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन का मुख्य उद्देश्य अनुदेशन देना या सूचना देना हैं।

रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन में शिक्षार्थी को प्रत्येक फ्रेम एक सीधी रेखा में होते हैं। इनकी कोई शाखाएं नहीं होती हैं। सभी छात्र एक–एक फ्रेम कर क्रम से अध्ययन करते जाते हैं।

फ्रेम 1 → फ्रेम 2 → फ्रेम 3 → फ्रेम 4 → फ्रेम 5

**परिभाषा** – डॉ. आनन्द ''रेखीय अभिक्रमण का शाब्दिक अर्थ एक सीधी रेखा का अभिक्रमण हैं जिसमें छात्र प्रथम पद से अन्तिम पद तक सीधी रेखा की भांति चलता है। इसके अतिरिक्त सभी छात्र एक जैसे ही पथ पर चलकर एक पद से दूसरे पद की ओर बढ़ते हैं जब तक यह सारा प्रोग्राम पूर्ण नहीं कर लेते''।

| | |
|---|---|
| उदाहरण – | नमी, जल वायु, आवास इत्यादि हैं ये जीवो को प्रभावित करते हैं। जीवो को प्रभावित करने वाले वातावरण के पहलुओं में से कोई दो पहलू बताइये। |
| जल, वायु | निम्नलिखित में से किन स्थानों पर जीव (पादप व जन्तु रहते हैं वह स्थान कहलाता हैं। (आवास/स्थान/घर) |
| आवास : | भिन्न–भिन्न जीवों के भिन्न–भिन्न आवास होते हैं। जैसे शेर का आवास घने जंगल में गुफा होती हैं। चुहे का आवास बताइये। |
| बिल : | इसी प्रकार भिन्न–भिन्न पौधों का आवास भी भिन्न होता हैं। शैवाल का आवास होता हैं। |
| जल : | जल के पादम व जन्तु जल में ही रह सकते हैं वे दूसरे स्थानो पर जीवित नहीं रह सकते हैं। मछली तथा शैवाल जल के बाहर नहीं रह सकते है। जल में रहने वाले पादप तथा जन्तु का 1–1 उदाहरण बताइये। |
| मछली शैवाल : | मछली जलीय आवास में रहने वाला जन्तु हैं यदि उसे जल से बाहर स्थल पर रख दिया जाये तो क्या होगा ? |
| मर जायेगी : | कमल सिंघाड़ा, इत्यादि पादप जल में रहते हैं अतः इन्हें जलीय पादप कहते हैं। यदि इन पादपों को स्थल पर लगाया जाये तो क्या होगा ? |
| वे नहीं लगेगे : | ऊँट रेगिस्तान में रहता हैं उसे रेगिस्तान का .................. कहते हैं। |

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries

जहाज : ऊँट के शरीर में जल को संग्रहित करने की क्षमता होती हैं वह कई दिनों तक बिना पानी के रह सकता हैं क्यों कि शरीर में जल को ........................ करने की क्षमता होती हैं।

**रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की अवधारणाएं/मान्यताएं**

1. इसकी मान्यता है कि छात्र कम त्रुटियां करे तो वह शीघ्र तथा अधिक सीखता हैं।
2. पाठ्यवस्तु को बोधगम्य बनाने के लिए उसे विद्यार्थियों के सम्मुख छोटे–छोटे पदों में प्रस्तुत किया जाता हैं।
3. शिक्षार्थी अपनी स्वंय की गति से सीखता हैं।
4. शिक्षार्थी स्वंय सक्रिय रहकर सीखता हैं तो अधिगम अधिक प्रभावी एवं स्थायी रहता हैं।
5. अनुक्रिया के तुरन्त बाद परिणाम की जानकारी दे दी जाए तो अधिगम तीव्र एवं स्थायी होता है।

**रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताएं –**

1. निर्माण सरल
2. यह मनोविज्ञान के सिद्धान्त पर आधारित हैं।
3. इसमें पाठ्यवस्तु को छोटे–छोटे फ्रेमों में प्रस्तुत किया जाता हैं। अतः इसको समझना सरल हैं।
4. इसमें व्यक्तिगत विभिन्नता के सिद्धान्त को महत्व दिया गया हैं।
5. इसके द्वारा शिक्षार्थी स्वंय सक्रिय रहता हैं।
6. यह इस सिद्धान्त पर आधारित हैं कि कम त्रुटियों से अधिक सीखा जाता हैं क्यों कि जितनी त्रुटियां अधिक होगी उतना ही उत्साह कम होता चला जायेगा और सीखना या अधिगम कम होता चला जायेगा।

**रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की सीमाएं –**

1. सभी विषयों के सभी प्रकरणों में इसका निर्माण किया जाना सम्भव नहीं हैं।
2. यह सिद्धान्त छात्र द्वारा त्रुटि करने पर यह बताने में समर्थ नहीं हैं कि वह गलत क्यों हैं ? त्रुटि करने पर उसे वह फ्रेम पुनः पढ़ना पड़ता हैं।
3. प्रतिभाशाली शिक्षार्थी छोटे–छोटे पदों को पढ़ने में रूचि नहीं दिखाते हैं क्यों कि ये पद/फ्रेम उनके लिए बहुत सरल होते हैं।
4. छात्र को स्वतन्त्रता नहीं हैं।
5. सभी को एक ही क्रम का पालन करना होता हैं।
6. इसके द्वारा केवल अनुदेशन होता है।
7. केवल ज्ञान का उद्देश्य प्राप्त होता हैं।

10. **शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन को उदाहरण सहित समझाइये ।**
**Give a suitable example and explain the**

**उत्तर** नार्मन ए. क्राउडर ने 1960 में शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन का प्रतिपादन किया। रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन में केवल अनुदेशन का कार्य किया जाता हैं। जबकि इसमें निदान व उपचार की कोई जगह नहीं हैं। इसी कमी को दूर करते हुए शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन में अनुदेशन के साथ–साथ उपचार व कमियों को दूर रखने की व्यवस्था रखी गयी है।

शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन के तीन कार्य हैं–

1. प्रस्तुतीकरण
2. निदान
3. उपचार

इस प्रकार के अनुदेशन में विकल्प चुनकर उत्तर देने की व्यवस्था रखी जाती हैं ।

अतः स्पष्ट है कि किसी फ्रेम 1 में पूछे गये प्रश्न के उत्तर के तीन विकल्प होगे। A, B और C इनमें से A सही

इस प्रकार के अनुदेशन में विकल्प चुनकर उत्तर देने की व्यवस्था रखी जाती हैं ।

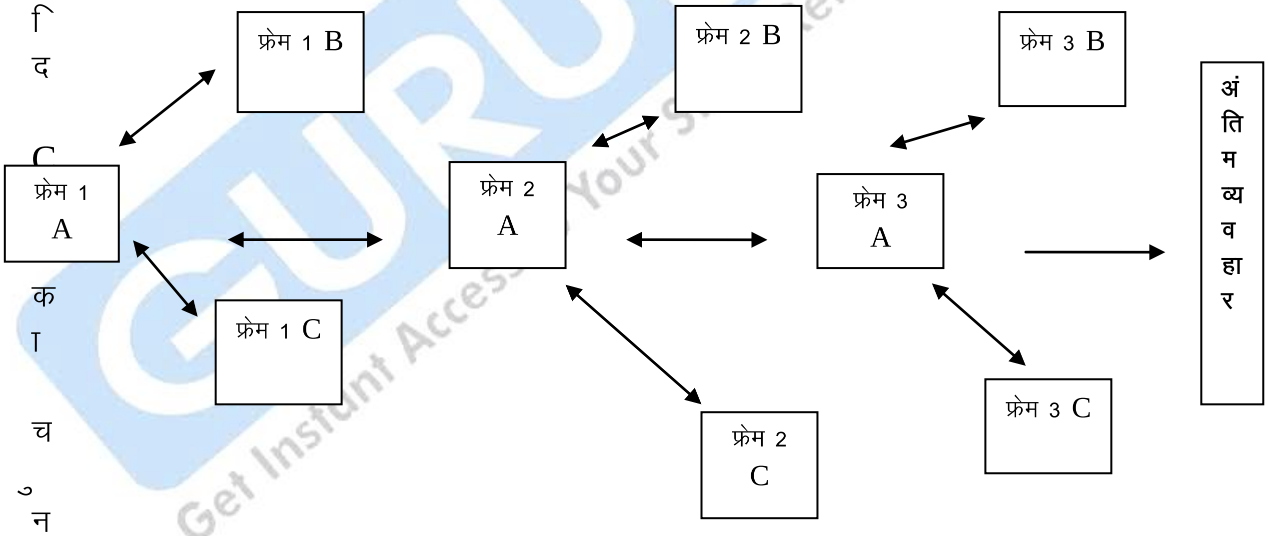


यदि C का चुनाव करता हैं तो फ्रेम 1C का अध्ययन करेगा तथा पता लगायेगा कि विकल्प गलत क्यों हैं।

इस प्रकार त्रुटि करने पर शिक्षार्थी को उचित उपचार मिलता हैं।

उदाहरण – फ्रेम –1 पृष्ठ संख्या –1

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

'जीव विज्ञान में जन्तुओं के वर्गीकरण को संक्षेप में बताना '

विभिन्न जन्तुओं के बारे में अध्ययन करने के लिए जीव विज्ञान में इनकी विशेषताओं के आधार पर विभिन्न वर्गो में रखा गया हैं। आप बताइये 'चिड़िया' किस वर्ग में आती हैं।

A. पक्षी वर्ग (AVES)
B. स्तनधारी वर्ग (MAMMAL)
C. रेपटाइल वर्ग (REPTILE)

पृष्ठ संख्या –9

फ्रेम (1) A

आपका उत्तर पक्षी वर्ग सही हैं क्यों कि आप समझ गये हैं कि चिड़िया में पंख, दांत सहित चोंच पर होते हैं यह समतायी होते हैं जो पक्षी वर्ग के लक्षण हैं।

पृष्ठ संख्या –8

फ्रेम (1) B

आपका उत्तर स्तनधारी गलत हैं क्यों कि इस वर्ग के लक्षणों में पर नहीं होते हैं । चोच में दांत होते हैं, बच्चे पैदा करते हैं, स्तन होते हैं जैसे– चमगादड़, चूहा आदि चिड़िया के सम्बन्ध में ये सब मेल नहीं खाते हैं।

पृष्ठ संख्या –7

फ्रेम (1) C

आपका उत्तर रैपटाइल वर्ग गलत हैं। क्यों कि चिड़िया अंडे तो देती हैं परन्तु न उसका रक्त असमतापी होता हैं न ही उसके दांत होते हैं न वह रेंगती हैं जो रेपटाइल वर्ग के प्रमुख लक्षण हैं।

**शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन की प्रमुख धारणाएँ**

1. शिक्षार्थी जिस फ्रेम को पढ़ रहा हैं उस फ्रेम को अच्छी तरह से समझ लेगा।
2. इसमें त्रुटियों के उपचार करके सीखने को अधिक स्थायी मानते हुए शिक्षण सामग्री को व्यवस्थित किया जाता हैं।
3. यह एक लचीली पद्धति होने के कारण सभी स्तर के शिक्षार्थियों के लिये उपयोगी हैं।
4. इसके द्वारा तार्किक शक्ति का विकास होकर तथा शिक्षार्थी तुलना करना व भेद करना सीख जाते हैं।

**शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताएँ –**

1. इसके फ्रेम में अपेक्षाकृत अधिक सामग्री होती हैं।
2. इसमें लिखकर उत्तर देने की अपेक्षा विकल्पों में से उत्तर को चुनना होता हैं।

3. तार्किक शक्ति का विकास – कई विकल्पों में से 1 को चुनने के कारण
4. शिक्षार्थियों की गलतियों का उपचार करने की व्यवस्था होती हैं।
5. प्रतिभावान छात्रों के लिए समय की बचत ।
6. पृष्ठ पोषण देने की तुरन्त व्यवस्था।
7. विद्यार्थियों की क्षमताओं को अधिक महत्त्व।

**अनुदेशन की सीमाए :–**

1. शिक्षार्थी को सही विकल्प की जानकारी न होने पर सही विकल्प तक पहुँचने में काफी समय लगता हैं।
2. बड़ी कक्षाओं अर्थात उच्च योग्यता वाले छात्रों के लिए उपयोगी।
3. इसमें बार–बार पन्ने पलटने से बालक उकता जाते हैं।
4. शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन अपेक्षाकृत अधिक खर्चीला हैं।
5. मन्दबुद्धि बालकों के लिए कम उपयोगी हैं।
6. इसके निर्माण के लिए प्रशिक्षित व योग्य शिक्षकों का न मिलना ।

**रेखीय और शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन में अन्तर –**

| | **रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन** | **शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन** |
|---|---|---|
| 1 | इसमें फ्रेम का आकार छोटा होता हैं लगभग 1 या 2 वाक्य | इसमें पदों का आकार अपेक्षाकृत बड़ा होता हैं लगभग 1 या 2 पैराग्रफ |
| 2 | इसमें सभी फ्रेमों को पढ़ना आवश्यक हैं | इसमें सभी फ्रेमों को पढ़ना आवश्यक न होकर केवल सही विकल्प तक पहुंचना होता हैं। |
| 3 | इसमें शिक्षार्थी उत्तर देने के लिए स्वतन्त्र नहीं हैं। उन्हें निश्चित उत्तर लिखना होता हैं। | इसमें विभिन्न विकल्पों में से उत्तर चुनना होता हैं अतः शिक्षार्थी निश्चित उत्तर देने के लिए बाध्य नहीं हैं। |
| 4 | इसमें शिक्षार्थी प्रश्नों के उत्तरों का निर्माण स्वंय करते हैं | इसमें शिक्षार्थी दिय गये विकल्पों में से उत्तर को चुनता हैं। |
| 5 | इसमें तत्काल प्रतिपुष्टि होती है। | इसमें प्रतिपुष्टि अप्रत्यक्ष रूप से होती हैं क्यों कि यह स्पष्टीकरण पर अधिक बल देता हैं। |
| 6 | इसमें त्रुटियों को महत्व नही दिया जाता हैं। | इसमें त्रुटियों को महत्व दिया जाता है। |
| 7 | छोटी कक्षाओं के लिए अधिक उपयोगी | बड़ी कक्षाओं के लिए उपयोगी |
| 8 | शिक्षार्थी एक ही दिशा में आगे बढ़ता है। | विभिन्न शाखाओं से होकर आगे बढ़ता है। |
| 9 | उद्देश्य ज्ञान की वृद्धि | उद्देश्य –तार्किक शक्ति का विकास |

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

11. **कम्प्यूटर आधारित अनुदेशन से आप क्या समझते हैं ? स्पष्ट कीजिए ।**
**What do you mean by computer assisted instruction ?**

**उत्तर** कम्प्यूटर आधारित अनुदेशन वैयक्तिक अनुदेशन में सहायता करता हैं तथा अन्य किसी व्यवस्था की अपेक्षा अधिक प्रभावी होता हैं। कम्प्यूटर आधारित अनुदेशन अभिक्रमित अनुदेशन के व्यावहारिक प्रयोग का परिणाम हैं। अभिक्रमित अनुदेशन का उद्देश्य विद्यार्थियों की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु व्यक्तिगत अनुदेशन प्रदान करता हैं। इस हेतु कुछ प्रभावी व नमनीय उपकरणों के माध्यम द्वारा संरचित एवं व्यवस्थित सूचनाओं का संग्रहण एवं भंडारण की आवश्यकता अनुभव की गई। जिससे अधिगमकर्ता अपनी आवश्यकता के अनुसार विषय वस्तु की चयन कर सके। कम्प्यूटर एक ऐसा साधन हैं जो प्रत्येक अधिगमकर्ता की आवश्यकताओं की पूर्ति करता हैं। कम्प्यूटर एक ऐसा इलेक्ट्रॉनिक्स साधन हैं जिसके द्वारा गणितीय क्रियाएं की जा सकती हैं, तार्किक निर्णय किये जा सकते हैं। एक कम्प्यूटर में तीन प्रमुख तत्व पाये जाते हैं–

(1) अदा
(2) प्रदा
(3) केन्द्रीय इकाई
(4) संग्रहण इकाई

(1) अदा – अदा का प्रयोग आंकड़ो एवं निर्देश देने के लिए प्रयुक्त किया जाता हैं। इसमें टाईपराईटर की भांति 'की–बोर्ड' एवं माउस होता हैं जिसकी सहायता से संग्रहित सूचनाओं को नियन्त्रित किया जाता हैं।

(2) प्रदा– प्रदा से तात्पर्य स्क्रीन से हैं। इसके साथ ही प्रिन्टर, प्लोटर (Plotter) व कार्ड पंच होते हैं।

(3) केन्द्रीय इकाई – यह कम्प्यूटर की बुद्धि हैं। जहां सूचनाओं का प्रक्रमण होता हैं। इसका प्रयोग अनुदेशन एवं व्याख्या के लिए किया जाता हैं।

(4) संग्रहण इकाई – संग्रहण इकाई को डिस्क ड्राइव के नाम से जाना जाता हैं । इसका कार्य कम्प्यूटर पर किये गये कार्य को फलॉपी में सुरक्षित रिकॉर्ड करना तथा उसे सुरक्षित रखना हैं।

एटकिन्सन ने 1968 में बालकों की वाचन योग्यता के अधिगम के लिये कम्प्यूटर आधारित अनुदेशन का प्रयोग किया। वाचन योग्यता के प्रोग्राम या अनुदेशन को तीन चरणों मे बताया गया जो इस प्रकार हैं–

1. कम्प्यूटर से जुड़े प्रोजेक्टर पर एक अक्षर को प्रक्षेपित किया जाता हैं। रिकॉर्ड की गई आवाज बालक को प्रोजेक्टर पर अक्षर देखने एवं लाइट पैन से छूने का निर्देश देती हैं।

प्रोजेक्टर

| a |
|---|

| स्क्रीन |
|---|
| a |
| b |
| c |
| d |
| e |
| f |

जब बालक 'अ' अक्षर को पहिचान लेता हैं तो उसे द्वितीय चरण में अक्षरों के जोड़ो को पहिचानने का निर्देश दिया जाता हैं।

प्रोजेक्टर

| ab |
|---|

| स्क्रीन |
|---|
| ba |
| ad |
| ab |
| cd |
| da |

2. तीसरी अवस्था में दो एवं तीन अक्षरों को जोड़कर स्क्रीन/पटल पर प्रदर्शित किया जाता हैं। बालक को कभी एक प्रतीक को छूने का निर्देश दिया जाता हैं–

han → Hat

oo → oo

HAN → HAT

oo → oo

बालक को समानता एंव विभिन्नता को पहचानना होता हैं। बिना ध्वनियों के साथ समबद्ध किये अक्षरों की पहिचान करायी जाती हैं। इसके पश्चात् बालक को अक्षरों के समूह की पहिचान करायी

जाती हैं। फिर बालक को अक्षरों को मिलती–जुलती ध्वनियों से सम्बद्ध कर पहिचान करायी जाती हैं। जैसे–

an

r □

rat

bat

cat

fat

team

ram

रिकॉर्ड की हुयी आवाज से बालक को शब्द को छूने एवं बोलने के लिए कहा जाता हैं। बालक को एक ओर लिखे अक्षर व आयत के उपर लिखे अक्षर को जोड़कर बने शब्द को बोलना व छूना होता हैं। यदि बालक सही शब्द को छूता हैं तो वह आयत में बने कोष्ठक में दिखाई देता हैं। यदि बालक त्रुटि करता हैं तो कम्प्यूटर उसे उसकी गलत अनुक्रिया से परिरिचित कराता हैं।

इसके पश्चात् बालक को उसकी त्रुटि को ध्यान में रखते हुए अभ्यास कार्य कराया जाता हैं। एक बार सरल वाचन कौशलों में निष्णात हो जाने के बाद वह आगे की कौशलों की योग्यता हेतु अग्रसर होता हैं। कम्प्यूटर आधारित अनुदेशन विद्यार्थियों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त कर उन्हें प्रत्येक अधिगम स्तर पर सकारात्मक सुदृढ़ीकरण प्रदान करता हैं।

**कम्प्यूटर आधारित अनुदेशन के प्रकार–**

- ट्यूटोरियल कार्यक्रम
- अभ्यास कार्यक्रम
- अनुरूपित कार्यक्रम
- अन्वेषण कार्यक्रम
- खेल कार्यक्रम

**ट्यूटोरियल कार्यक्रम** – इस कार्यक्रम में सूचनाओं को छोटी–छोटी इकाइयों में विभक्त कर प्रश्नों को दिया जाता हैं कम्प्यूटर की सहायता से अनुक्रिया का विश्लेषण कर उपयुक्त पृष्ठ पोषण प्रदान

किया जाता हैं। यह अभिक्रमित अनुदेशन के समान हैं। कम्प्यूटर आधारित अनुदेशन में भी रेखीय व शाखीय पद्धति को अपनाया जाता हैं। जितने अधिक विकल्प होते हैं, उतना ही उसकी अनुकूलनशीलता विद्यार्थी के लिए अधिक होती हैं।

**अभ्यास कार्यक्रम** – विद्यार्थियों की आवश्यकता के मद्देनजर अभ्यास कार्यक्रम की महत्ता हैं । विद्यार्थी कम्प्यूटर के द्वारा अभ्यास करके अपनी प्रगति को तत्काल देखकर स्वंय को पुष्टिपोषण प्रदान करता हैं। इसके माध्यम से विद्यार्थी अपनी प्रगति का भी ज्ञान प्राप्त कर सकता हैं। अपनी गति व समय के आधार पर विद्यार्थी कौशलों में निष्णात हो जाते हैं।

**अनुरूपित कार्यक्रम** – इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अधिगमकर्ता के समक्ष वास्तविक परिस्थिति के समान ही लघुस्तर पर अनुरूपित परिस्थितियां उत्पन्न की जाती हैं अनुरूपित परिस्थितियों का प्रयोग जन–धन की हानि को रोकने व समय की मितव्ययता के लिए किया जाता हैं। वायुयान की उड़ान, नाभिकीय प्रतिक्रिया, दो नक्षत्रों, तारों या पिन्डों का टकराव आदि अनुरूपित कार्यक्रम के उदाहरण हैं।

**अन्वेक्षण कार्यक्रम–** अन्वेक्षण कार्यक्रम में अधिगम एवं शिक्षण में आगमनात्मक उपागम को अपनाया जाता हैं। अधिगमकर्ता प्रयास व भूल विधि के द्वारा अपनी समस्या का समाधान करते हैं।
खेल कार्यक्रम – इस कार्यक्रम के अन्तर्गत कम्प्यूटर विद्यार्थी को खेल–खेल में संलग्न करते हुए प्रतिद्वन्दी खिलाड़ी की भूमिका का निर्वहन करता हैं। अधिगम की सीमा एवं स्तर खेल के प्रकार पर निर्भर करता हैं। वर्तनी, स्थानो के नाम एवं सामान्य ज्ञान आदि कुछ खेल कार्यक्रम है ।

**खेल कार्यक्रम** – इस कार्यक्रम के अन्तर्गत कम्प्यूटर विद्यार्थी को खेल–खेल में संलग्न करते हुए प्रतिद्वन्दी खिलाड़ी की भूमिका का निर्वहन करता हैं। अधिगम की सीमा एवं स्तर खेल के प्रकार पर निर्भर करता हैं। वर्तनी, स्थानो के नाम एवं सामान्य ज्ञान आदि कुछ खेल कार्यक्रम हैं।

GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...

# सन्दर्भ ग्रन्थ सूची


| | | |
|---|---|---|
| 1. | अरोड़ा रीता, मारवाहा सुदेश | शिक्षण एवं अधिगम के मनोसामाजिक आधार |
| 2 | पाठक पी.डी. | शिक्षा मनोविज्ञान |
| 3 | शिरीषपाल | शिक्षा मनोविज्ञान |
| 4 | शर्मा आर.ए. | शिक्षा तकनीकी |


GURUKPO Get Instant Access to Your Study Related Queries...